

## द्वितीय अध्याय

### आधुनिकता एवं उत्तर-आधुनिकता की अवधारणा

1. आधुनिकता की अवधारणा
  - I. आधुनिकता का अर्थ एवं परिभाषा
  - II. आधुनिकता का उद्भव
  - III. आधुनिकता का प्रभाव
2. उत्तर-आधुनिकता की अवधारणा
  - I. अर्थ एवं परिभाषा
  - II. उत्तर-आधुनिकता के तत्त्व
    1. विरचनावाद, विखंडनवाद या विनिर्मितवाद
    2. विकेन्द्रीयता
    3. लोकप्रिय संस्कृति की ओर उन्मुखता
    4. स्थानीयता का महत्त्व
    5. नव-इतिहासवाद
    6. अंतवाद
    7. परंपरा का अतिक्रमण
  - III. उत्तर-आधुनिकता का उद्भव
  - IV. उत्तर-आधुनिकता का व्याप
  - V. उत्तर-आधुनिकता का प्रभाव
  - VI. भारत में उत्तर-आधुनिकता
  - VII. उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व
3. आधुनिकता और उत्तर-आधुनिकता  
निष्कर्ष  
संदर्भ सूची

## द्वितीय अध्याय

### आधुनिकता एवं उत्तर-आधुनिकता की अवधारणा

#### 1. आधुनिकता की अवधारणा :

उत्तर-आधुनिकता को समझने से पहले आधुनिकता को समझ लेना अति आवश्यक बन जाता है, क्योंकि आधुनिकता उत्तर आधुनिकता की पूर्व प्रवृत्ति एवं काल रहा है। आधुनिकता के कारण ही उत्तर-आधुनिकता का उद्भव हुआ है।

#### 1. आधुनिकता का अर्थ एवं परिभाषा :

वर्तमान में सबसे अधिक प्रचलित शब्द है - आधुनिक। सामान्य जीवन एवं भाषा में इस शब्द का प्रयोग आम बन गया है। अंग्रेजी शब्द 'मॉडर्न' की व्युत्पत्ति लैटिन से हुई है और शब्दकोश के अनुसार इसका अर्थ है - 'वर्तमान या हाल ही में घटित। लैटिन में इस शब्द का अर्थ था - 'इस काल में'। किंतु धीरे-धीरे अंग्रेजी में इस शब्द का प्रयोग कुछ अलग अर्थ में होने लगा और इसका अभिप्राय हो गया - सामाजिक संरचना एवं मूल्यों में परिवर्तन या फिर नए मूल्यों एवं एक नई सोच का जन्म।<sup>1</sup> अर्थात् 'आधुनिक' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है - पहला, काल से संबंधित अर्थ और दूसरा, प्रवृत्तिमूलक अर्थ। डॉ. विनयकुमार पाठक के अनुसार - "'आधुनिक' का शाब्दिक अर्थ 'आजकल या वर्तमान' है जो पूर्व में घटित न हुआ हो और अब नये ढंग से अवतीर्ण हुआ है। यह प्रायः परंपरा के विपरीतार्थक में प्रयुक्त होता है। यह वर्तमान की कोख से जन्म लेता और बृहद सीमाओं को स्पर्श करता है। यद्यपि समसामयिकता और आधुनिकता समय के साथ-साथ चलते हैं...।"<sup>2</sup> इस दृष्टि से प्रत्येक नया काल अपने आप में आधुनिक होता है। परंपरा का विरोध तथा नयापन इस शब्द की विशेषता रही है।

आधुनिकता का उद्भव पाश्चात्य में हुआ है। नवीन खोजों की शुरुआत का परिणाम आधुनिकता माना गया। पाश्चात्य शब्दावली में आधुनिकता का अर्थ - स्थापित नियमों, परंपराओं एवं मान्यताओं से अलग हटकर विश्व में मनुष्य की स्थिति एवं इसके कार्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण अपनाना है।<sup>3</sup> अर्थात् प्राचीनकाल से चली आ रही परंपराओं, मान्यताओं एवं नियमों को छोड़कर नवीनता भरी दृष्टि का स्वीकार कर लेना आधुनिकता है। आधुनिकता को आत्मसात करने वाला व्यक्ति परंपरा का स्वीकार नहीं करता। वह परंपरा को प्रगति एवं कार्यकुशलता में बाधक बननेवाला ढकोसला मानता

है। पारंपरिक जीवन-मूल्य उसके लिए बंधन बन जाता है। इसलिए वह उसका अस्वीकार करता है। यदि उसे मजबूरन परंपरा-ग्रस्त लोगों के साथ रहना पड़ता है तो उनसे अलग अपनी एक नीजि पहचान बनाने का प्रयास करता है। समाजशास्त्री अभिजित पाठक के अनुसार - “आधुनिक होने का अर्थ जीने के वैज्ञानिक/औद्योगिक जीवन-यापन की एकरूप/सार्वभौमिक संस्कृति को स्वीकार करना है। दूसरे शब्दों में, आधुनिक होने का अर्थ पारंपरिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और प्रजातीय समुदायों के बीच के अंतर को समाप्त कर देना है। यही विश्व-स्तर पर सोचने जैसा है जहाँ स्थानीय ज्ञान-पद्धतियाँ अप्रासंगिक हो जाती हैं।”<sup>4</sup> तात्पर्य यह कि आधुनिकता विभिन्न संस्कृतियों को एक-दूसरे के निकट ला खड़ा करती है और उनके बीच रहे अंतरों को समाप्त करके विश्व-संस्कृति का निर्माण करती है। ऐसी स्थिति में परंपरा से चली आ रही सारी ज्ञान-पद्धतियाँ बेकार-सी हो जाती हैं और नई ज्ञान-पद्धतियाँ एवं विचारधाराओं का जन्म होता है।

कई विद्वानों ने आधुनिकता के अर्थ को परिभाषित करने का प्रयास किया है, जिनमें से कुछैक परिभाषाएँ यहाँ पर उद्धृत हैं -

मैक्स वेबर के अनुसार - “आधुनिकता व्यक्ति एवं समाज के सदा से चले आ रहे स्वरूप को मिलनेवाली स्पष्ट स्वीकृति है। आधुनिक अस्मिता अतीत में की गई अस्मिता की संरचनाओं की श्रृंखला में मात्र अगली कड़ी नहीं है, बल्कि यह इन संरचनाओं के मूल में उपस्थित कारणों पर से परदा उठाने की प्रक्रिया है।”<sup>5</sup> मैक्स वेबर की परिभाषा से दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं कि आधुनिकता व्यक्ति एवं समाज के द्वारा की गई स्वीकृति है तथा आधुनिकता अतीत की संरचनाओं के कारणों पर से परदा उठाने की प्रक्रिया है।

आधुनिक समाज को केन्द्र में रखकर पीटर बर्जर ने कहा कि - “आधुनिक समाज व्यक्तिगत स्वतंत्रता की कुछ ऐसी गारंटी करता है कि इस समाज में जीनेवाला आधुनिक व्यक्ति अपने-आपको पारंपरिक समाज में जीनेवाले लोगों से अलग समझता है। आधुनिक व्यक्ति, जो सामाजिक भूमिकाओं एवं संस्थाओं की पारंपरिक संरचनाओं से अपने आपको मुक्त कर चुका है, एक नग्न व्यक्तित्व की तरह होता है जो संस्थागत भूमिकाओं से स्वतंत्र है।”<sup>6</sup> आधुनिकता की ओर संकेत करनेवाली आधुनिक समाज की इस परिभाषा में पीटर बर्जर ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं पारंपरिक समाज से अलगाव जैसी आधुनिक समाज की विशेषताओं को व्याख्यायित किया है।

आधुनिकता को व्याख्यायित करते हुए शील्स ने आधुनिक व्यक्ति का सांसारिक रूप चित्रित किया है, यथा - “आधुनिक होने का अर्थ है ‘एडवांस’ होना, अर्थात् धनी होना, पारिवारिक व धार्मिक सत्ता के झमेलों से मुक्त होना । इसका अर्थ है - तार्किक व बुद्धिवादी होना । यदि कोई ऐसा बुद्धिवादी हो जाता है तो उसके लिए सांसारिकता, वैज्ञानिकतावाद एवं सुखवाद को छोड़कर और कोई परंपरा नहीं रह जाती ।”<sup>7</sup> आधुनिकता की इस परिभाषा में व्यक्ति का एक नया रूप सामने आता है । वह वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग करके सांसारिक सुख को महत्त्व देता है । पारिवारिक व धार्मिक सत्ता-बोध से वह दूर रहता है । तार्किकता एवं बौद्धिकता के जरिए वह पारंपरिक जीवन-पद्धति से अपने को मुक्त कर लेता है । सुखपूर्ण भावी जीवन के लिए वह वर्तमान में ही आयोजन कर लेता है ।

डॉ. विनयकुमार पाठक के अनुसार - “आधुनिक बोध का अर्थ आधुनिक दृष्टि है जो सोचने, देखने और जीने के अद्यतन आचरण से आपूरित अकुंठ का स्वीकार है । इसमें महत्त्वपूर्ण वह दृष्टि है जो प्रायः अपने और अपने संबंधों से बाहर जाकर तटस्थ ढंग से विश्लेषण कर सकती है । आधुनिक होने का अर्थ व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों स्तरों पर मनुज वर्तमान परिवेश और अद्यतन बौद्धिक आवेश से आवेष्टित हो । ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकी से वर्तमान में जो नवीन बोध आया है, वह आधुनिकता बोध है जो अरोमांटिक और अमिथिकीय है ।”<sup>8</sup> प्रस्तुत परिभाषा से आधुनिकता की एक प्रमुख विशेषता सामने आती है, वह है - तार्किकता । तार्किकता के आधार पर व्यक्ति में तटस्थ दृष्टि का विकास होता है । तार्किक-तटस्थ दृष्टि से वह अपने संबंधों को एवं अपने परिवेश को देखता है । व्यक्ति की इस तार्किक दृष्टि एवं आधुनिकता बोध का प्रमुख कारण है - ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास ।

सुधीश पचौरी का मंतव्य है कि - “आधुनिकता की विचार-व्यवस्था इस प्रकार चलती है : राष्ट्र-राज्य जो एक समाज का अंतिम रूप है, जो केंद्रीकृत अधिरचना है, वह एक सामूहिक और आधुनिक सभ्यता की अनिवार्य इच्छा है, वह एकाधिकारी है, वही प्रतिनिधि है, वह ईश्वर की जगह ले लेती है, वह तर्क की श्रेष्ठतम स्थिति है, वह इतिहास का अंतिम निचोड़ है, इसमें विश्वास की जगह प्रकृति-विज्ञान है, रहस्य खत्म हो चले हैं।”<sup>9</sup> अर्थात् आधुनिकता में सभी कुछ केन्द्रीकृत हो चुका है । विज्ञान की नवीनतम खोजों ने सभी रहस्यों को खत्म कर दिया है और ईश्वर की जगह विज्ञान स्थायी हो गया है । तार्किक शक्ति इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है ।

अतः आधुनिकता अर्थात् एक प्रवृत्ति के रूप में, विचारधारा के रूप में, एक चिंतन के रूप में परंपरागत मान्यताओं तथा परंपरागत नियमों के विरुद्ध एक नवीन बौद्धिक एवं तार्किक जीवन-शैली । ज्ञान की नई शाखाओं के उद्भव के कारण समाज में आया बदलाव आधुनिकता है । आधुनिकता के कारण समाज दो स्वरूपों में दिखाई पड़ता है - एक, परंपरा से मुक्त समाज और दो, परंपरा से आबद्ध समाज । पारंपरिक समाज एक ऐसा समाज होता है जिसने परंपरा से चले आ रहे सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं एवं विचारों से लिप्त जीवन-शैली का स्वीकार किया है । पारंपरिक समाज के लोग किसी तरह के परिवर्तन की आवश्यकता ही नहीं समझते और न ही कल्पना कर सकते हैं । पूरा समाज पुरानी प्रथाओं के अनुसार जीता है । इसमें व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं होता । जैसे कि भारतीय समाज की वर्ण-व्यवस्था का ढाँचा । परंपरा से मुक्त जो आधुनिक समाज है, वह पुरानी मान्यताओं, प्रथाओं एवं नियमों का त्याग करता है । आधुनिक व्यक्ति स्वतंत्र रूप से निर्णय करता है एवं उसकी अपनी एक जीवन-शैली होती है । पारंपरिक बंधनों से मुक्त होकर अपनी जीवन-शैली में परिवर्तन करने के लिए वह स्वतंत्र होता है ।

तार्किकता आधुनिकता की आधारशीला है । तार्किकता के परिणाम-स्वरूप तटस्थ दृष्टि का विकास होता है । युक्तिसंगत तार्किकता से निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति होती है । इससे देखने, समझने एवं सोचने की शक्ति विकसित होती है । तार्किकता के कारण ही आधुनिकता सफल हुई और उसने वैश्विक स्तर पर सामाजिक ढाँचे में उथल-पूथल मचा दी ।

## II. आधुनिकता का उद्भव :

आधुनिकता का अर्थ जानने के बाद आधुनिकता का उद्भव स्थल, उद्भव समय एवं उद्भव के कारणों को जानना जरूरी बन जाता है ।

आधुनिकता अपने प्रारंभिक समय में 'प्रबोधन युग' के रूप में जानी जाती थी । अतः आधुनिकता के उद्भव से परिचित होने के लिए 'प्रबोधन' को समझ लेना आवश्यक बन जाता है । समाजशास्त्री अभिजित पाठक के अनुसार - "यूरोपीय प्रबोध की अभिव्यक्ति अठारहवीं शब्दी के मध्य में मॉंटेस्क्यू, वोल्टेयर, डेविड ह्यूम, रूसो, कांट एवं एडम स्मिथ की कृतियों में होती है । यह एक नये युगबोध का प्रारंभ था - एक ऐसा युगबोध जो तर्क, अनुभववाद, विज्ञान, विकास, धर्मनिरपेक्षता एवं विश्ववाद पर आधारित था । दूसरे शब्दों में, विज्ञान की सफलता के प्रति लोग बहुत आशावादी थे । वोल्टेयर ने

न्यूटन को एक नए आदर्श हीरो के रूप में प्रस्तुत किया। कांट ने इस युग को 'तर्क की ज्योति' कहा क्योंकि यह अंध विश्वास एवं अज्ञान की गहरी निद्रा से समाज को जगाने की सामान्य प्रक्रिया थी।<sup>10</sup> विज्ञान की प्रारंभिक सफलता को लेकर तत्कालीन चिंतक एवं साहित्यकार अत्यंत आशावादी थे। तत्कालीन समाज अंधविश्वास के अंधकार में भटक रहा था। वैज्ञानिक खोजों के परिणाम-स्वरूप अंधविश्वासों पर से परदा हटने लगा। तार्किकता के सहारे ज्ञानोदय हो रहा था। समाज में व्याप्त अज्ञान को दूर करने की यह शुरुआत थी। अभिजित पाठक का मंतव्य है कि - "प्रबोधन परियोजना की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि यह विज्ञान को पूर्णतः वस्तुनिष्ठ एवं सार्वभौमिक ज्ञान मानता है।"<sup>11</sup> प्रबोधन को व्याख्यायित करते हुए इमानुएल कांट ने लिखा है - "मनुष्य द्वारा अपने-आप पर थोपी गई अप्रौढता से निकलने को प्रबोधन कहते हैं। अपनी समझ को निश्चित दिशा में प्रयोग नहीं कर पाने की अक्षमता को अप्रौढता कहते हैं। यह अप्रौढता अपने-आप पर स्वयं की थोपी हुई है। तर्क-स्वयं समाप्त होने लगता है। और ऐसा इसलिए नहीं कि इसमें समझने की क्षमता नहीं है। बल्कि ऐसा इसलिए है कि इसमें दृढ़ता एवं साहस की कमी है। इसमें यह इच्छा नहीं है कि यह बिना किसी बाह्य सत्ता के अपनी सहायता करें। बुद्धिमान बनो। जागो। हिम्मत करो कि तुम अपनी समझ के अनुसार व्यवहार करो। यह प्रबोधन युग का नारा है।"<sup>12</sup> अर्थात् मनुष्य अज्ञान और अंधकार में जीता है। इस अज्ञान और अंधकार के लिए मनुष्य स्वयं जवाबदार है, क्योंकि बाह्य सत्ता की सहायता के बिना इसे दूर करने के लिए उसमें दृढ़ता एवं साहस नहीं है। जागृत हो के, अपनी सोच एवं समझ को निश्चित दिशा देकर, बुद्धिमान बनकर पूरी क्षमता एवं साहस के साथ स्वतंत्रता से जीना ही कांट के अनुसार प्रबोधन है। अर्थात् स्वयं अपने-आप को जागृत करना प्रबोधन है।

इस प्रकार 'प्रबोधन युग' आधुनिकता का प्रारंभिक चरण है, हिस्सा है, भूमिका है।

आधुनिकता के उद्भव के संदर्भ में प्रमोद तलगेरि का मत है कि - "सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी में यूरोप में एक महत्वपूर्ण वैचारिक परिवर्तन आया - इसके तहत दर्शन एवं विज्ञान को धर्म एवं धर्मविज्ञान से बिल्कुल अलग करके देखा जाने लगा। इस विभाजन के बाद यूरोप में भिन्न प्रकार का विकास प्रारंभ हुआ। इसने मनुष्य एवं प्रकृति के संबंध को पूरी तरह बदल दिया। प्रकृति अब वैज्ञानिक अनुसंधान कर नियंत्रण में करने की वस्तु बन गई। भौतिक वास्तविकता के प्रति विवेचनात्मक विश्लेषण के इस नए रवैये के साथ ही मध्यकालीन यूरोप एक नए युग में प्रवेश कर गया इस नवीन युग

के प्रतिपादक थे देकार्त, न्यूटन, बैकन, कांट जिन्होंने पारंपरिक सोच को चर्च की सत्ता से मुक्त किया और मनुष्य के स्वतंत्र एवं वैयक्तिक विचारों का महत्व स्थापित किया । उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विज्ञान एवं तकनीक में होनेवाली प्रगति ने यूरोप के सामाजिक ढाँचे को पूरी तरह बदल दिया ।”<sup>13</sup> कुछ इसी ही प्रकार पाउलोस मार ग्रेगोरिओस ने आधुनिकता का उद्भव स्थल, समय एवं कारणों के संदर्भ में कहा है, यथा - “अठारवीं शताब्दी के मध्य में यूरोप में बौद्धिकता के प्रति जो उत्तेजना आई वहीं से आधुनिक युग का प्रारंभ माना जा सकता है । सन् 1789 में हुई फ्रांसीसी क्रांति पश्चिमी समाज में इस बौद्धिक-मानसिक तथा राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक उत्तेजना की चरम सीमा थी । यूरोप में यह प्रक्रिया अठारवीं शताब्दी के मध्य से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक चलती रही और अब भी उन भू-भागों में फैल रही है जहाँ की संस्कृतियों ने नगरीय-प्रौद्योगिकी-औद्योगिक तंत्र को इसकी पूँजीवादी उत्पाद प्रविधि तथा मानवीय श्रेष्ठता एवं स्वायत्तता पर आधारित कैल्विनवादी-व्यक्तिवादी मूल्य, संस्कृति, चिकित्सापद्धति, संचार तंत्र, शिक्षा पद्धति तथा राजनीतिक-आर्थिक संस्थाओं को अपना लिया है । आज के हम सभी ‘आधुनिक शिक्षा प्राप्त लोग’ इसी उत्तेजना एवं प्रक्रिया के उत्पाद हैं । भारत में भी यह प्रक्रिया बहुत बड़े स्तर पर फैल चुकी है लेकिन अभी तक इसने सभी लोगों को अपने प्रभाव में नहीं लिया है क्योंकि अभी तक सारे लोग शिक्षित नहीं हुए हैं ।”<sup>14</sup> इन संदर्भों से यह स्पष्ट होता है कि आधुनिकता का उद्भव स्थल यूरोप रहा है तथा अठारहवीं शताब्दी के मध्य में आई बौद्धिक क्रांति उसका उद्भवकाल माना जा सकता है ।

सतरहवीं-अठारहवीं शताब्दी में विभिन्न वैज्ञानिक खोजों का सिलसिला शुरू हुआ । परिणामस्वरूप ‘प्रबोधन युग’ का जन्म हुआ । समाज पर बौद्धिक-वैचारिक परिवर्तन लक्षित होने लगा । फलश्रुति यह हुई कि अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक आते-आते आधुनिकता ने अपनी जड़ें जमा ली । बौद्धिक उन्नति ने जिस नवीन युग को प्रस्थापित किया उसे देकार्त, कांट, बैकन जैसे चिंतकों ने व्याख्यायित करके एक नवीन विचारधारा में परिणत कर दिया ।

बौद्धिक-क्रांति ने समाज के पूरे ढाँचे पर अपना प्रभाव छोड़ा । राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रों में इसका प्रभाव रहा । विज्ञान ने धर्म पर सवाल खड़े कर दिए । प्रकृति और मनुष्य के बीच के संबंध बदल गए । प्रकृति अब चमत्कारिक दैवीय रूप न रहकर वैज्ञानिक अनुसंधान के द्वारा नियंत्रित की

जाने वाली वस्तु बन गई । भौतिकता एवं वास्तविकता मानव-जीवन के आधार बन गए। पारंपरिक ईश्वरीय सत्ता से मनुष्य को मुक्त कर दिया गया । वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति ने यूरोपीय समाज के ढाँचे को पूरी तरह बदल दिया । अतः मानव जीवन में आनेवाले इन बदलावों के कारण आधुनिकता का उद्भव हुआ ।

आधुनिकता के उद्भव का कारण देते हुए सुधीश पचौरी ने कहा है - “प्रकृति नियंत्रण योग्य है । कारण-कार्य श्रृंखला अनंत है, ज्ञान लक्ष्य को निर्धारित करता है, लक्ष्य है स्वास्थ्य, आनंद, दुःख से छुटकारा । दुःख का कारण क्या है ? अभाव ! यही अन्याय का कारण है । ‘अभाव’ को दूर किया जा सकता है । ज्ञान का यह आधुनिक मार्ग सत्रहवीं-अठारहवीं सदी में बना । विकास की अवधारणा यहीं से आई । आधुनिकता की यह योजना मानवता की तमाम जरूरतों को पूरा कर सकती थी ।”<sup>15</sup> अर्थात् आधुनिकता का उद्भव मूलतः मनुष्य की जरूरियातों को पूर्ण करने के लिए हुआ । जरूरतें पूर्ण न होने पर दुःख उत्पन्न होता है । वैज्ञानिक आविष्कार जरूरतों को पूर्ण करके अभाव का अंत करते हैं । फलतः मनुष्य स्वस्थ एवं आनंदित रहता है । इसी वैज्ञानिक सोच ने आधुनिकता को जन्म दिया ।

### III. आधुनिकता का प्रभाव :

आविष्कृत आधुनिकता ने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि सभी मानव-जीवन से जुड़े क्षेत्रों पर अपना अमीट प्रभाव छोड़ा है । आधुनिकता ने जितने सुविधा संपन्न प्रभाव छोड़े उससे कई अधिक जटिल समस्याओं को उत्पन्न किया है ।

आधुनिकता के प्रभाव के संदर्भ में प्रमोद तलगेरि ने कहा है कि - “उन्नत शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विज्ञान एवं तकनीक में होनेवाली प्रगति ने यूरोप के सामाजिक ढाँचे को पूरी तरह बदल दिया । कृषि समाज का स्थान नगरीय औद्योगिक समाज ने ले लिया । नगरीकरण की इस तीव्र प्रक्रिया के फलस्वरूप बड़े शहरों का जन्म हुआ और इसके साथ सामाजिक व्यवहार में बहुत परिवर्तन आया । नई शहरी संस्थाओं का निर्माण हुआ, जैसे ऑफिस, बैंक, रेल-यातायात, बीमा कंपनियाँ, उद्योगशालाएँ, शेयर बाजार, अधिकारी-तंत्र । स्वचालित वाहनों एवं बहुमंजिली इमारतों का निर्माण शुरू हो गया । संयुक्त परिवार टूट गए । जीविका की तलाश में लोग शहरों के सुसंगठित उद्योगों की तरफ आने लगे । अब लोग छोटे फ्लैटों में रहते थे और फैक्ट्री या ऑफिस में काम करते थे । मानव व्यवहार औद्योगिक अनुशासन से नियंत्रित होने लगा जिससे जीवन में एक



यांत्रिक नियमितता आ गई । शहरों का जीवन अधिक उन्मुक्त एवं अरूढिवादी किंतु गुमनाम हो गया ।”<sup>16</sup> अतः स्पष्ट होता है कि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने औद्योगिक क्रांति की और इसी औद्योगिक क्रांति ने समाज में समूचा परिवर्तन ला दिया । गाँव टूटते गए और शहर अस्तित्व में आते गए । गाँव के लोगों का आकर्षण बहुमंजिली इमारतों वाले शहर बन गए । सामाजिक व्यवहार में औपचारिकता आती गई ।

आधुनिकता के प्रभाव-स्वरूप परंपराओं, मान्यताओं, कुरुढियों, प्रथाओं आदि के बंधन शिथिल हुए । आधुनिकता ने न केवल परंपरिक सामाजिक ढाँचे पर प्रहार किया, किन्तु पारंपरिक समाज की अतार्किक धार्मिक आस्था पर भी चोट की । वैज्ञानिक तथ्यों ने ईश्वर की शक्ति पर भी शंका की । चमत्कार, रहस्य, अंधविश्वास आदि पर से परदा हटने लगा । समाज की पारंपरिक संस्कृति को आधुनिकता ने पीछे धकेल दिया ।

आधुनिकता ने राष्ट्र की शक्ति को मजबूत करने के लिए सैन्यशक्ति को महत्त्व दिया। राष्ट्र की रक्षा हेतु अत्याधुनिक टेकनोलोजी का उपयोग करके अत्यंत घातक अस्त्र-शस्त्र विकसित किए गए । परमाणु-बोम इसी वैज्ञानिक आविष्कारों का परिणाम है । कम्प्यूटर के उद्भव ने इसमें चार चांद लगा दिया है ।

भारतीय समाज में आधुनिकता के प्रभाव को समझ पाना कठिन है । क्योंकि भारतीय समाज की समाज-व्यवस्था की संरचना ही कुछ ऐसी है । भारतीय समाज ने आधुनिकता के सारे उपकरणों का स्वीकार करके सुविधा-संपन्न जीवन व्यतीत करना तो शुरू कर दिया, किन्तु भारतीय समाज संपूर्ण आधुनिकता को आत्मसात नहीं कर सका। भारतीय समाज में आज भी अंधविश्वास, कुरीतियाँ, कुप्रथाएँ एवं मान्यताएँ समाज को जकड़े हुए हैं । इसीलिए इन्द्रनाथ चौधरी ने कहा कि - “आधुनिकता में पारंपरिक एवं नवीन दोनों मूल्य समाहित हो जाते हैं ।”<sup>17</sup> भारतीय समाज दो स्वरूपों में विभक्त है - परंपरा के साथ जीनेवाला समाज और परंपरा से मुक्त होकर जीनेवाला समाज ।

समय प्रवाह के साथ-साथ आधुनिकता ने समाज में कई समस्याएँ उत्पन्न की और आधुनिकता अपने निर्धारित लक्ष्य तक नहीं पहुँच पायी । जिस विज्ञान ने सुविधाएँ दी उसी विज्ञान के विकास ने मानव जाति के भविष्य पर प्रश्नार्थ लगा दिया । अभिजित पाठक ने आधुनिकता की नकारात्मक छवि को साफ जाहिर की, यथा - “आधुनिकता में सब कुछ अच्छा ही नहीं है । विज्ञान मुझे अनिश्चितताएँ और बेचैनियाँ देता है । इसकी निस्पृह वस्तुनिष्ठता, मूल्य-निरपेक्षता एवं अवैयक्तिकता में भयानक हिंसा निहित है ।

यह हिंसा प्रकृति के प्रौद्योगिकीय दोहन, विश्व के उपनिवेशीकरण और आधुनिक-वैज्ञानिक युद्ध के रूप में व्यक्त होता है।<sup>18</sup> स्पष्ट है कि आधुनिकता के कारण आज विश्व पर युद्ध की स्थिति बनी रहती है। प्रकृति के सतत दोहन के कारण मानव-जीवन पर कुदरती आपत्तियों का खतरा मँडरा रहा है। दो विश्व-युद्ध इसी आधुनिकता का परिणाम है। आधुनिकता में जो हिंसा और बर्बरता छिपी रही थी उसे दोनों विश्वयुद्धों ने प्रकाशित कर दिया है। विश्व-युद्धों के बाद उत्पन्न परिस्थिति को कृष्णदत्त पालीवाल ने कुछ इस प्रकार व्याख्यायित किया है - “हर क्षेत्र में पतन और आधुनिकतावाद से उत्पन्न केंद्रीयतावाद का आतंक। हर जगह सांस्कृतिक संशय, मूल्यांधता, बौद्धिक नपुंसकता का असहाय-आत्मनिर्वासन, आत्म-परायेपन का बोध।”<sup>19</sup> अर्थात् आधुनिकता ने विश्व-युद्धों का निर्माण किया। युद्धों के पीछे सत्ता स्थापित करने की मानसिकता थी। वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग करके एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को पराजित करने का प्रयास करता था। युद्धों का परिणाम यह हुआ कि लाखों लोगों की हिंसा के बाद महासत्ताएँ अस्तित्व में आयी। अर्थात् आधुनिकता ने केन्द्रवाद को जन्म दिया। विज्ञान के इस विघातक स्वरूप से मानव अस्मिता तहस-नहस हो गई। आधुनिकता की बौद्धिकता अचानक बेकार सिद्ध हुई।

भारतीय संदर्भ में आधुनिकता के प्रभाव को लेकर कृष्णदत्त पालीवाल कहते हैं कि - “आधुनिकता ने भारतीय सभ्यता को, संस्कृति को केले के पत्तों की तरह अपनी आवारा हवाओं से चीर दिया। लेकिन विडंबना यह है कि इस यूरोपीय आधुनिकता ने ‘प्रगति’ और ‘विकास’ के सुनहरे सपने दिखाए। ‘सेकुलर’ फिलासफी का पाठ पढ़ाया और ऐसे कौशल से पढ़ाया कि उसके भीतर से जातिवाद, प्रदेशवाद, सांप्रदायिकतावाद, व्यक्तिवाद और अधिनायकवाद के अंकुर फूटकर वृक्ष बने।”<sup>20</sup> अर्थात् सन् 1850 के बाद भारत में आई हुई आधुनिकता ने भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव छोड़ा। आधुनिकता ने प्रगति और विकास के नाम पर भारतीय समाज को सुख-सुविधा के लिए प्रसाधनों की आपूर्ति की। शिक्षा के माध्यम से समाज में जागृति फैलाने का प्रयास किया। सभी का विकास करने का सपना दिखाया। किन्तु भारत में आधुनिकता का परिणाम यह हुआ कि पूरा राष्ट्र जातिवाद, प्रांतवाद, सांप्रदायिकतावाद जैसी समस्याओं में घिर गया। मूलतः जातिवाद जैसी समस्या भारत की प्राचीन समस्या रही है, किन्तु आधुनिकता ने इसे और अधिक सशक्त किया। इस संदर्भ में सुधीश पचौरी का मंतव्य इस बात को अधिक स्पष्ट कर जाता है, उन्होंने कहा कि - “अपने समाज के संदर्भ जागृत करके देखें।

अल्पसंख्यकों, स्त्रियों और पिछड़ों, दलितों की अस्मिताएँ अब तक दबी रही हैं। पिछली दो सदियों में अधिक मजबूत हुई ब्राह्मणवादी व्यवस्था और पश्चिमी आधुनिकतावादी विमर्श की गहरी मित्रता के चलते ऐसा हुआ है। उपनिवेशवादी विमर्श और ब्राह्मणवादी विमर्श उस आधुनिकतावादी विमर्श में खान-पानी ही बने जो यूरोप में चला और 'अन्यों' को हाशियों पर डालता रहा, दबाता रहा।<sup>21</sup> अर्थात् भारत में आई हुई आधुनिकता का फायदा एक विशेष वर्ग को ही हुआ। इसका मतलब यह हुआ कि भारत में भी आधुनिकता ने केन्द्रवाद को अधिक महत्व दिया। ब्राह्मण वर्ग भारत का चीर-स्थायी केन्द्र रहा है। परंपराओं, मान्यताओं, कुप्रथाओं आदि को छोड़ने की बातें खोखली सिद्ध हुईं। ब्राह्मणवादी-व्यवस्था ने अपने फायदे के लिए आधुनिकता का उपयोग किया और आधुनिकता ने अपनी उपनिवेशवादी दृष्टि को सफल करने के लिए ब्राह्मणवादी व्यवस्था का उपयोग किया। फलतः हाशिये के लोग हाशिये पर ही रह गए।

अंततः इतना स्पष्ट है कि आधुनिकता अर्थात् एक निश्चित विचारधारा को व्याख्यायित करने वाला पद है। जिसमें पुराने के विरुद्ध नये का संघर्ष है। विज्ञान, तर्क एवं बुद्धि इसके प्रमुख हथियार हैं। वैज्ञानिक आविष्कार एवं औद्योगिक क्रांति के परिणाम-स्वरूप मानव जीवन में आया हुआ परिवर्तन आधुनिकता का परिचय है। मानव जरूरियातों को पूर्ण करना आधुनिकता लक्ष्य है। इसके लिए आधुनिकता ने प्रकृति का दोहन किया। मानव द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त कर लेने पर ईश्वर की शक्ति पर भी शंका उत्पन्न हुई। अठारहवीं शताब्दी में यूरोप में उद्भवित होनेवाली आधुनिकता ने संपूर्ण विश्व पर अपना प्रभाव छोड़ा। मानव जीवन में आनेवाली सुविधाओं को लेकर संपूर्ण विश्व इससे आकर्षित था। किन्तु दो विश्व-युद्ध, सामाजिक विभाजन एवं अंतर्विरोधों को लेकर आधुनिकता के प्रति मोहभंग हुआ।

## 2. उत्तर-आधुनिकता की अवधारणा :

उत्तर-आधुनिकता का सही स्वरूप निर्धारित करने के लिए उसकी परिभाषा, अर्थ, तत्त्व, उद्भव, व्याप, प्रभाव, महत्त्व आदि बातों पर प्रकाश डालना जरूरी बन जाता है। इन बातों को प्रकाशित करने पर उत्तर-आधुनिकता अपने संपूर्ण स्वरूप में सामने आयेगी।

### 1. अर्थ एवं परिभाषा :

‘उत्तर-आधुनिकता’ शब्द वर्तमान की चर्चा का नया केन्द्र है। सामान्यतः ‘उत्तर-आधुनिकता’ शब्द ‘आधुनिकता’ के अर्थ-संदर्भ की ओर संकेत करता है। जैसे - ‘पूर्ण मध्यकाल’ और ‘उत्तर मध्यकाल’ वैसे ही ‘आधुनिकता’ और ‘उत्तर-आधुनिकता’। मूलतः ‘आधुनिकता’ शब्द से पूर्व ‘उत्तर’ शब्द जुड़कर बना है - ‘उत्तर-आधुनिकता’ शब्द। डॉ. विनयकुमार पाठक के अनुसार - “इसका (उत्तर-आधुनिकता का) एक अर्थ ‘आधुनिक के बाद का आधुनिक’ या ‘अत्याधुनिक’ भी माना जा सकता है। जहाँ आधुनिकता रूकती है, वहाँ उत्तर-आधुनिकता की यात्रा प्रारंभ होती है। पहले-पहल तो यह शब्द चौंकाने वाला सिद्ध हुआ लेकिन साहित्य में इसके व्यवहार व विमर्श से यह अनजान नहीं रहा।”<sup>22</sup> इस अर्थ में ‘उत्तर-आधुनिकता’ अर्थात् ‘आधुनिकता’ के बाद आने वाला काल। अर्थात् ‘उत्तर-आधुनिकता’ काल-विशेष के रूप में अर्थ प्रकट करती है। कृष्णदत्त पालीवाल के हिसाब से - “‘पोस्ट’ के लिए ‘उत्तर’ शब्द चल पडा है जिसकी मूल अर्थ ध्वनि है कि हम एक ऐसे काल-विशेष में जी रहे हैं जिसमें सबकुछ ‘पोस्ट’ हो चुका है या होने की तैयारी कर उठा है।”<sup>23</sup> इस दृष्टि से ‘उत्तर-आधुनिकता’ शब्द एक प्रवृत्ति की ओर संकेत करता है। संक्षेप में ‘उत्तर-आधुनिकता’ शब्द एक काल के रूप में तथा एक विचारधारा के रूप में अपना अर्थ प्रकट करता है।

उत्तर-आधुनिकता वर्तमान में आये हुए परिवर्तनों को व्याख्यायित करती है। वह मानव-जीवन के ढाँचे को बताती है और नई राहों को प्रदर्शित करती है। जैसे-जैसे उत्तर-आधुनिकता की लाक्षणिकताएँ सामने आती गईं वैसे लोगों में मान्यताएं उभरने लगीं। कई लोगों ने उसे दर्शन के क्षेत्र से निकला हुआ विचार माना। कई लोगों ने आधुनिकता की प्रतिक्रिया माना। कई लोगों ने उसे पुनरुत्थान कहा। कई लोगों ने तकनीक के दबाव के आगे मानव का पराजय-बोध स्वीकार किया। कई लोगों ने उसे उपनिवेशवाद का अस्त्र मानकर विरोध किया। वस्तुतः नई उत्पन्न परिस्थितियाँ हमें उत्तर-आधुनिकता की ओर ले जाती हैं।

उत्तर-आधुनिकता की परिभाषा देने का प्रयास कई विद्वानों ने किया, किन्तु आज तक समुचित परिभाषा नहीं दे सके। उत्तर-आधुनिकता का स्वरूप ही ऐसा रहा है कि उसे परिभाषित करना विद्वानों के लिए मुश्किल-सा रहा है। कृष्णदत्त पालीवाल ने कहा है - “बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कला-साहित्य, मीडिया, अर्थतंत्र मंडी-अर्थव्यवस्था, राजनीति, समाज, दर्शन आदि के क्षेत्रों में जो व्यापक परिवर्तन आए हैं उन सभी में उत्तर-आधुनिकता की प्रेत-छाया है। उस प्रेत-छाया को विकसित देशों ने

विकासशील देशों को दिया है । इस स्थिति के कारण उत्तर-आधुनिकता शब्द के कई अर्थ हैं, लेकिन ये अर्थ इतने व्यापक हैं कि उन्हें परिभाषाओं में बाँधा नहीं जा सकता । विद्वानों ने खूब सोचकर इतना भर कहा है कि उत्तर-आधुनिकतावाद सन् साठ के दशक के उन मुक्ति-आंदोलनों, स्वाधीनता खोजी विचारधाराओं, निरंकुश योन-प्रवृत्तियों से निकला है जिनसे सभी पुरानी नीतियों-सिद्धांतों, विचारधाराओं का अंत कर दिया है । हर विचार पर बैठा अनुशासन टूट गया है और चिंतन की स्वाधीनता का उफनता हुआ सागर इस नई संस्कृति में मौजूद है ।”<sup>24</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता मानव-जीवन के हर क्षेत्र में आये हुए परिवर्तन को प्रस्तुत करती है और यह परिवर्तन इतना व्यापक है कि ‘उत्तर-आधुनिकता’ अपने-आप में कई अर्थ समेटे हुए है । इसलिए उसकी कोई निश्चित परिभाषा संभव नहीं हो पाई। केवल उसके अलग-अलग दृष्टिबिंदुओं को व्याख्यायित किया जा सका है । अतः उत्तर-आधुनिकता को संपूर्ण रूप में परिभाषित करना, यह एक विडंबना भरी स्थिति बनी रही है । सुधीश पंचौरी ने भी स्वीकार किया है कि - “उत्तर-आधुनिकता पर जिस गति से विचार हो रहा है, जिस रफ्तार से साहित्य आ रहा है उसे देखकर लगता है कि कोई भी अध्ययन योजना उसकी मुकम्मल तसवीर नहीं खींच सकती । जब तक आप एक लाइन खींचेंगे तब तक वह आगे चली जाएगी । उत्तर-आधुनिकता अपनी संपूर्ण व्याख्या खुद बनाया करती है । इसलिए उसकी कोई संपूर्ण व्याख्या और संपूर्ण पुस्तक कहीं नहीं लिखी जा सकती । हरैक की अपनी उत्तर-आधुनिकता है और हो सकती है ।”<sup>25</sup>

‘उत्तर-आधुनिकता’ के अर्थ को समझाने के लिए विद्वानों के द्वारा उसके अर्थ-संदर्भ में जो कुछ धारणाएँ प्रस्तुत की गई हैं, उसके कुछैक उदाहरण यहाँ पर उद्धृत है -

अभिजित पाठक के अनुसार - “उत्तर-आधुनिकता उस विश्ववादी आधुनिकता के प्रति एक प्रतिक्रिया है जो सामान्यतः प्रत्यक्षवादी, प्रौद्योगिकी-प्रधान एवं तार्किक मानी जाती है । अधिक आसान करके समझना चाहे तो कह सकते हैं कि उत्तर-आधुनिकता एक मनःस्थिति है । गौर करने की बात यह है कि ध्वंसात्मक प्रवृत्ति इसकी एक विशेषता मानी जा रही है । यह एक सत्य को दूसरे सत्य से, सौंदर्य के एक मापदंड को दूसरे मापदंड से, एक जीवन-आदर्श को दूसरे जीवन-आदर्श से विस्थापित नहीं करती है । विरचना इसका एकमात्र कार्य जान पड़ता है ।”<sup>26</sup>

सुधीश पंचौरी मानते हैं कि - “‘उत्तर-आधुनिकता’ आधुनिकता का विस्तार भी है और ‘अंतिमबिंदु’ भी है । वह अनुपस्थिति की उपस्थिति है । वह ‘प्रतिनिधित्वरहित’ की

‘उपस्थिति’ है ।... कहीं वह नीत्शे का पुनर्जन्मवाद है, कहीं वह महावृत्तांत का अंत है, कहीं वह आधुनिकता के केन्द्रवाद का अपकेंद्रण है, कहीं वह उत्पादन से उपभोक्ता की ओर अपसारण है, कहीं वह देश का अंत है, कहीं वह भूमंडलीय स्थिति है । कहीं वह राष्ट्र-राज्यों की सांस्कृतिक सीमाओं का विगलन है, कहीं वह एक साथ ‘भूमंडलीय’ और ‘स्थानीयता’ है, कहीं वह ‘भूत’ की जगह ‘आत्म’ का लोटना है । कहीं वह माध्यमीकृत यथार्थ है, कहीं वह ‘बोध’ न होने की ‘अबोधता’ है... वह नितांत चंचल श्रेणी है ।”<sup>27</sup>

कृष्णदत्त पालीवाल उत्तर-आधुनिकता का अर्थ-संदर्भ देते हुए कहते हैं - “उत्तर-आधुनिकतावाद शब्द कई भिन्न अर्थ-संदर्भों में प्रयुक्त होने वाला शब्द है जिसमें वर्तमान की पूरी मनोदशा, माहौला, विभ्रम, परिदृश्य समाहित है । जिसमें विचार का ‘केंद्रवाद’ ध्वस्त हो गया है और विकेन्द्रीयतावाद की प्रवृत्ति उभर रही है । दमित, दलित, नारी, अल्पसंख्यक जो कभी हाशिए पर थे, केन्द्र में आ रहे हैं । परिधि से केंद्र की ओर की उनकी इस यात्रा में मुक्ति का नवीन दर्शन है और एक नए भविष्य का स्वप्न ।”<sup>28</sup>

डॉ. मीना खतार ने उत्तर-आधुनिकता के संदर्भ में अपनी धारणा कुछ इस प्रकार दी है - “उत्तर-आधुनिकता मुख्यतः एक निश्चित विचार या दर्शन से अधिक एक प्रवृत्ति का नाम है । जिसका जन्म बीसवीं सदी के यूरोप में हुआ । साहित्य, समाज, विज्ञान तथा आम जीवन में इस प्रवृत्ति के लक्षण दिखने लगे । वैसे हर क्षेत्र में इसके भिन्न-भिन्न रूप हैं ।”<sup>29</sup>

उत्तर-आधुनिकता को स्थापित करने वाले उसके सबसे पहले प्रवक्ता जां-फ्रांस्वा ल्योतार ने कहा कि - “यह पद (उत्तर आधुनिकता) उन्नीसवीं सदी के बाद बहुत से परिवर्तनों के फलस्वरूप बनी उस सांस्कृतिक अवस्था को बताता है कि जिसने विज्ञान, साहित्य और कलाओं के लिए लगभग अंतिम-से मान लिये गए खेल के नियमों को पलट दिया है ।”<sup>30</sup>

उपरोक्त इन परिभाषाओं और धारणाओं से यह स्पष्ट होता है कि उत्तर-आधुनिकता अपने-आप में व्यापक अर्थ समेटे हुए है । बीसवीं शताब्दी के मध्य से समाज में आया हुआ नवीन परिवर्तन उत्तर-आधुनिकता को जन्म देता है और यह उत्तर-आधुनिकता समाज के परिवर्तित ढाँचे को व्याख्यायित भी करती है और परिवर्तन की प्रक्रिया को तीव्र भी बनाती है । आधुनिकता के दौरान आये हुए परिवर्तनों पर उत्तर-आधुनिकता ने सीधा अपना प्रभाव छोड़ा । आधुनिकता ने केन्द्रवाद, पूँजीवाद आदि को

जन्म दिया । उत्तर-आधुनिकता केन्द्रवाद और पूँजीवाद को खारिज करने का पूरा प्रयास करती है ।

उपरोक्त उदाहरणों से उत्तर-आधुनिकता का यह अर्थ भी फलित होता है कि उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता की प्रतिक्रिया भी, अंत भी और विस्तार भी है । आधुनिकता की वैज्ञानिक खोजों के कारण भयावह स्थिति में हुई हिंसा के प्रति प्रतिक्रिया देते हुए उत्तर-आधुनिकता विज्ञान का विरोध करती है और मानवता का पक्ष लेती है । आधुनिकता की बौद्धिक क्रांति के परिणाम-स्वरूप परंपरा से स्थापित मान्यताओं, कुप्रथाओं, कुरुढियों का विरोध हुआ, उत्तर-आधुनिकता भी इन्हें समूल नष्ट करने का प्रयास करती है । इस दृष्टि से उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का विस्तार है । कृष्णदत्त पालीवाल के अनुसार - “उत्तर-आधुनिकता के प्रवर्तक विद्वान जां-फ्रांस्वा ल्योतार यह तथ्य घोषित तौर पर सामने लाते रहे हैं कि उत्तर-आधुनिकता में नए अर्थ-संदर्भ अवश्य ग्रहण हुए हैं किन्तु यह आधुनिकता के युग का ही नया विस्तार है । देखा जाए तो उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता की ही ‘रि-साइट’ पुनर्व्याख्या है पुनर्लेखन भी । यह सच है कि सांस्कृतिक इतिहास में कोई काल ‘पूर्व’ या ‘उत्तर’ की परिभाषा में बँध नहीं पाता है - उसे बाँधने का प्रयत्न ही अर्थहीन है । इस दृष्टि से उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का अंत नहीं है बल्कि उसके भीतर से फूट फट पड़ी एक अवस्था है एक ऐसी अवस्था जो सातत्य के साथ मौजूद रहती है ।”<sup>31</sup>

उत्तर-आधुनिकता एक प्रवृत्ति है, एक विचारधारा है, जो अपनी पूर्ववर्ती सारी विचारधारा का अंत करके उनकी जगह अपना स्थायी स्थान बनाती है । ध्वंसात्मकता उसकी विशेषता है । वह वर्चस्व को चुनौती देती है और केन्द्र पर प्रहार करती है । केन्द्र में स्थापित सत्ता को विस्थापित करके हाशिए पर धकेलती है और हाशिए के लोगों को केन्द्र में लाती है । फलतः दलित-विमर्श, नारी-विमर्श जैसे विमर्शों का उद्भव होता है । अपने इन अर्थ-संदर्भों के साथ उत्तर-आधुनिकता एक विचारधारा के रूप में स्थित हुई है । इस संदर्भ में पाण्डेय शशिभूषण ‘शीतांशु’ का मंतव्य सुसंगत है, यथा - “निःसंदेह आज उत्तर-आधुनिकता एक विचारधारा तथा एक समीक्षा-प्रणाली के रूप में संचार-माध्यमों और बौद्धिकों-समीक्षकों के मन-मस्तिष्कों में विद्यमान है ।”<sup>32</sup>

संक्षेप में ‘उत्तर-आधुनिकता’ काल एवं विचारधारा के अर्थ में प्रयुक्त होने वाला शब्द है । आधुनिकता के बाद उसकी प्रतिक्रिया एवं उसके विस्तार के रूप में उत्तर-आधुनिकता का उद्भव हुआ है । अपने व्यापक अर्थ-संदर्भों के कारण उसकी संपूर्ण

परिभाषा संभव नहीं हो पाई है । वह परिवर्तित नये सामाजिक ढाँचे का प्रतिबिंब है और समाज के परिवर्तन की दिशा भी निर्धारित करती है ।

## II. उत्तर-आधुनिकता के तत्त्व :

उत्तर-आधुनिकता के तत्त्व उत्तर-आधुनिकता को समझने में भलीभाँति सहायक सिद्ध होते हैं । जिन तत्त्वों के आधार पर उत्तर-आधुनिकता खड़ी है, उन्हें समझने पर वह अपने-आप स्पष्ट हो जाती है । ये तत्त्व उत्तर-आधुनिकता के स्वरूप पर प्रकाश डालते हैं ।

### 1. विरचनावाद, विखंडनवाद या विनिर्मितिवाद :

अंग्रेजी शब्द 'डीकांस्ट्रक्शन' का हिन्दी में अर्थ है - विनिर्मिति, विरचना । हिन्दी में इसका सर्वाधिक प्रसिद्ध नाम है - विखंडन । विखंडन, विरचना या विनिर्मिति को उत्तर-आधुनिकता का प्रमुख तत्त्व माना जाता है । विखंडनवाद की पूरी अवधारणा को जन्म देने का श्रेय देरीदा को जाता है ।<sup>33</sup> देरीदा ने अपने विखंडनवाद के माध्यम से उत्तर-आधुनिकता की दार्शनिक, साहित्यिक विचारधारा को एक नया क्रांतिकारी मोड़ दिया है । ऐसा कोई पहले का सिद्धांत, विचार या पहलू नहीं है जिसे विखंडनवाद ने ध्वस्त न किया हो । कृष्णदत्त पालीवाल के अनुसार - "देरीदा का 'विनिर्मितिवाद' से अभिप्राय है - पाठ (टैक्स्ट) के अध्ययन की वह पद्धति जिसके द्वारा न केवल अर्थ को 'विस्थापित' किया जा सके बल्कि अर्थगत अद्वितीयत्व को 'विखंडित' करके दबे हुए अर्थ को ग्रहण और भाष्य किया जा सके । इसी विनिर्मिति की पद्धति से देरीदा ने प्लेटो, अरस्तु, कांट, हीडोल, फ्रायड, मार्क्स, नीत्शे, हुसेर्ल, हाइडेगर, सार्त्र और मिशेल फूको आदि की संरचनाओं को नए सिरे से पढ़ा और ऐसा पुनर्पाठ किया कि वे सब टूट-फूटकर बिखर गए।"<sup>34</sup> अर्थात् विखंडनवाद की प्रणाली के माध्यम से पाठ के निर्धारित अर्थ को विस्थापित करके, उसके अद्वितीयत्व को पूरी तरह विखंडित करके पाठ के भीतर जो अर्थ दबा हुआ है उसे बाहर लाया जाता है । विरचनावाद पाठ का जो अब तक अर्थ लिया जाता रहा है उसे अंतिम और समग्र नहीं मानता । वह पाठ के भीतर दबे हुए मूलार्थ की खोज करता है । दमित अर्थ की तलाश करके विरचनावाद पाठ के अर्थ को नए सिरे से गढ़ता है । विरचनावाद के स्वभाव को स्पष्ट करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा है - "परंपरा ने 'पाठ' का जो अर्थ निर्धारित कर दिया है - अर्थ उतना ही नहीं है । ज्ञान अथवा शक्ति के खेल में जो अर्थ दबा दिए गए हैं, उन्हें नए भाष्यों से विरचनावाद खोलने का प्रयत्न करता है ।"<sup>35</sup> इस प्रकार उत्तर-आधुनिकता का विखंडनवाद खंडन-मंडन



का काम करता है। पक्षपाति ज्ञानियों ने पाठ को केवल एक दृष्टि से देखकर अपनी धारणा के अनुसार एक अर्थ निर्धारित कर दिया था। उत्तर-आधुनिकता उसमें सेंध करती है और उस अर्थ को खण्ड-खण्ड में विभाजित करके विस्थापित करती है तथा उसकी जगह दबे हुए मूल अर्थ को बाहर लाती है।

## 2. विकेन्द्रीयता :

उत्तर-आधुनिकता का दूसरा महत्वपूर्ण तत्त्व है - विकेन्द्रीयता। विकेन्द्रीयता अर्थात् केन्द्र को विस्थापित करके हाशिए से लोगों को केन्द्र में लाना। आधुनिकता केन्द्रीय सत्ता से सीधी टकराती है। देवेन्द्र चौबे के अनुसार - “विकेन्द्रीकरण की धारणा, उत्तर-आधुनिकता की एक ऐसी मान्यता है जो रचना के साथ ही समाज और सामाजिक संबंधों की पुनर्व्याख्या की माँग करती है, कारण, शासक समुदाय अथवा बुद्धिजीवी समाज, साहित्य और कला के क्षेत्र में शुरू से ही एक केन्द्रीय परंपरा बनाए रखना चाहते हैं तथा जो भी विचार अथवा रचना उस केन्द्रीय परंपरा के खिलाफ विकसित होती है, वह उनकी आलोचना, विरोध एवं दमन का पात्र बनती है।”<sup>36</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता की विकेन्द्रीयता परंपरागत समाज एवं साहित्य के केन्द्र पर चोट करती है। और समाज एवं साहित्य के नए ढाँचे की माँग करती है। शासक समुदाय के बुद्धिजीवी लोग साहित्य एवं समाज पर अपना स्थापितहित बनाए रखना चाहते हैं। अतः वे केन्द्रीय परंपरा को भी बनाये रखना चाहते हैं। उत्तर-आधुनिकता इसी केन्द्रीय परंपरा का विरोध करती है और मिटाने का प्रयास करती है। उत्तर-आधुनिकता का यह तत्त्व मानव-जीवन के हरैक क्षेत्र पर अपना प्रभाव छोड़ता है। यथा डॉ. विनयकुमार पाठक के मुताबिक - “उत्तर आधुनिकतावाद समग्र सांस्कृतिक अवधारणाओं, परा भौतिकवाद, बुद्धिवाद एवं इतिहास की प्रचलित प्रविधियों को खारिज करता हुआ एक नई चिंतन-प्रणाली को प्रस्तुत करता है, जिसके अनुसार अभिजात्य वर्ग के बुने हुए समाज, भाषा के समस्त तंतु अर्थहीन हैं, बेमानी हैं। इनकी केन्द्रीयता को ध्वस्त करके हाशिये पर संस्थित जीवन को धूरी पर लाना है...”<sup>37</sup> उत्तर-आधुनिकता में विकेन्द्रीयता को समझाते हुए कृष्णदत्त पालीवाल कहते हैं कि - “उत्तर-आधुनिकतावाद हर तरह के ‘केन्द्रवाद’ का निषेध करता है। उसकी यात्रा केंद्र से परिधि की ओर है। समाज के विभिन्न समूह जो अभी तक हाशिए पर रहे हैं, जिनकी अस्मिता और आवाज को निरंतर दबाया गया है या जिन्हें अभिजात्यवादी - वर्चस्ववादी शक्तियों ने हाशिए पर धकेल दिया है - वे दमित और दलित समुदाय उत्तर-आधुनिक चिंतन में महत्वपूर्ण हो गए हैं।”<sup>38</sup> इस प्रकार उत्तर आधुनिकता का

‘विकेन्द्रीयता’ नामक तत्त्व हर तरह के ‘केन्द्रवाद’ को तोड़ता है, ध्वस्त करता है । उसकी यात्रा केन्द्र से परिधि की ओर की रही है । केन्द्र को हाशिए पर धकेलना तथा हाशिए को केन्द्र में लाना, उत्तर-आधुनिकता लक्ष्य रहा है ।

### 3. लोकप्रिय संस्कृति की ओर उन्मुखता :

उत्तर-आधुनिकता लोकप्रिय संस्कृति का खुलकर समर्थन करती है । विभिन्न कूपमंडूक संस्कृतियों ने छद्म वेश धारण किए हुए हैं । जिसमें स्थापित हित वाले लोग अस्मिता के नाम पर ढोंग ही करते हैं, दरअसल वे दमित-पीछड़े वर्ग के लोगों के साथ क्रूर मजाक ही करते हैं । अभिजात्य संस्कृति के लोग केवल दिखावा ही करते हैं, भीतर तो अमानवीयता भरी रहती है । उत्तर-आधुनिकता परंपरागत संस्कृतियों का विरोध करती है और सभी मनुष्यों को एक मानकर विश्व-संस्कृति का निर्माण करती है । यही लोकप्रिय संस्कृति है । कृष्णदत्त पालीफल के मत के अनुसार - “संस्कृति की चर्चा आते ही उत्तर-आधुनिकता लोकप्रिय संस्कृति की पक्षधरता को ग्रहण करती है । कहना चाहिए उसकी निष्ठा ‘लोकप्रिय संस्कृति’ (मॉस कल्चर) के प्रति है । पूरे जोर-शोर से उत्तर-आधुनिकतावाद, अभिजात्यवादी, कला-संस्कृति पर प्रहार करता है और उसे ‘लोकप्रिय संस्कृति’ से श्रेष्ठ नहीं मानता ।”<sup>39</sup>

### 4. स्थानीयता का महत्त्व :

उत्तर-आधुनिकता वैश्विक स्तर पर अपना स्वामित्व सिद्ध करनेवाली विचारधारा रही है । हरैक जगह पर उसका प्रभाव रहा है, किन्तु वह स्थानीयता को महत्त्व देकर आगे बढ़ती है । स्थानिक परिस्थितियाँ एवं समस्याएँ उसके केन्द्र में रहती हैं । इसलिए उत्तर-आधुनिकता के प्रखर विचारक फूको ने ‘विशिष्ट बुद्धिजीवियों’ की धारणा की है । फूको का मत अभिजित पाठक ने कुछ इस प्रकार प्रकट किया है - “ ‘विशिष्ट बुद्धिजीवी’, ‘विश्वस्तरीय बुद्धिजीवियों’ से अलग होते हैं । ‘विश्वस्तरीय बुद्धिजीवी’ जैसे वामपंथी या मार्क्सवादी बुद्धिजीवी अपने आपको ‘विश्वजनीनता के प्रवक्ता’ मानते हैं । उन्हें सत्य, न्याय एवं समानता जैसी बड़ी समस्याओं पर विचार करने में आनंद आता है । वे सभी स्थितियों के लिए न्यायसंगत एवं सत्य होना चाहते हैं । किंतु समस्याएँ विश्वस्तर पर न होकर एक स्तर विशेष पर होती हैं ।... विशिष्ट बुद्धिजीवियों को न विशेष परिस्थितियों एवं स्थानों में काम करना होता है जहाँ उनका जीवन एवं उनका काम उन्हें स्थापित करता है । आवास, अस्पताल, प्रयोगशाला, क्लिनिक, परिवार तथा यौन संबंध इन विशेष परिस्थितियों के उदाहरण हो सकते हैं ।”<sup>40</sup> अर्थात् उत्तर आधुनिकता स्थानीय

परिस्थितियों के हिसाब से अपना काम करती है। यही कारण है कि भारत में उत्तर-आधुनिकता के परिणाम-स्वरूप दलित-विमर्श, नारी-विमर्श जैसे विमर्शों को दिशा मिली।

### 5. नव-इतिहासवाद :

नव-इतिहासवाद उत्तर-आधुनिकता का एक अंगभूत तत्त्व है। 'नव-इतिहासवाद' की संकल्पना इसलिए उत्पन्न हुई कि साहित्य के अंतर्गत यह विचार चल पड़ा था कि साहित्य इतिहास और संस्कृति के अनुरूप होना चाहिए या नहीं। अतः दो कारणों से 'नव-इतिहासवाद' का जन्म हुआ - एक, साहित्यिक अध्ययन की सुविधा हेतु तथा दूसरा, इतिहास की प्रामाणिकता संदिग्ध है इसलिए। साहित्य में इतिहास और संस्कृति की भूमिका पर नए ढंग से विचार करने पर जो नवीन विचार-दृष्टि पैदा हुई उसे 'नव-इतिहासवाद' कहा गया। कृष्णदत्त पालीवाल के अनुसार - "नव-इतिहासवाद' की अवधारणा में इस तथ्य को निहित माना गया कि संस्कृति से साहित्य की निष्पत्ति होती है और साहित्य से संस्कृति की। क्योंकि 'भाषा' तो संस्कृति ही है और साहित्य भाषा में लिखा जाता है।"<sup>41</sup> 'नव इतिहासवाद' का दूसरा मूलभूत कारण है - अब तक लिखे गए इतिहास प्रामाणिकता की दृष्टि से संदिग्ध रहे हैं। उत्तर-आधुनिकतावादी मानते हैं कि उसमें भ्रामक बातें प्रस्तुत की गई हैं। डॉ. विनयकुमार पाठक ने इसी बात को स्पष्ट किया है, यथा - "उत्तर-आधुनिकता इतिहास को सत्य न समझकर भ्रम का पुलिंदा मानती है। इसके बावजूद वह विगत को वर्तमान का पुनरागमन भी निर्दिष्ट करती है अर्थात् अतीत को भी वर्तमान के नये पाठों व संदर्भों से जोड़ती है। इतिहास की परंपरा के समानांतर दूसरी परंपरा की खोज भी उत्तर-आधुनिकता का गंतव्य-मंतव्य है।"<sup>42</sup> इतिहास की प्रामाणिकता पर इसलिए सवाल खड़े हुए कि इतिहास में अधिकांश जो वर्णन मिलता है वह केवल एक विशेष वर्ग का ही मिलता है। उसमें सामान्य जनता का संपूर्ण रूप में समावेश नहीं हुआ है। इतिहास केन्द्र पर रहे लोगों की गाथा है तथा हाशिए पर जीने वाले लोगों को उसमें न्याय नहीं मिला है। उत्तर-आधुनिकता इन सभी बातों की ओर इंगित करते हुए इतिहास को पुनर्व्याख्यायित करने की माँग करती है।

### 6. अंतवाद :

'अंतवाद' उत्तर-आधुनिकता का सर्वाधिक विवादास्पद तत्त्व रहा है। उत्तर-आधुनिकता ने महाआख्यानों का, इतिहास का तथा लेखक का अंत घोषित किया है। उसकी दृष्टि में 'अंतवाद' का एक ही कारण है कि महाआख्यान और इतिहास दोनों सार्वभौमिक-शाश्वत सत्य की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। इनमें से लेखक का अंत

अलग दृष्टि से घोषित किया गया है। पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' ने लिखा है - "उत्तर-आधुनिकता ने महावृत्तांतों और अधिवृत्तांतों की सैद्धान्तिकी को खारिज कर दिया है। वह मार्क्सवाद और ईसाइयत को काटती है। ये दोनों ही उसकी दृष्टि में 'महावृत्तान्त' हैं। इसी तरह वह मनोविश्लेषणात्मकता के 'अधिवृत्तान्त' को भी नकारती है। उसकी दृष्टि में घटनाओं का कोई भी क्रम अपने-आप में महज वृत्तान्त है। इस दृष्टि से 'रामायण' और 'महाभारत' के महावृत्तान्तों को भी उत्तर-आधुनिकता नकारती है और उन्हें वृत्तान्त-मात्र के रूप में देखती है।"<sup>43</sup> अतः उत्तर-आधुनिकता मार्क्सवाद, फ़ोइडवाद, ईसाइतवाद आदि को केवल वृत्तांत मानती है, सार्वभौमिक-शाश्वत सत्य उनमें नहीं है। इसीलिए वह इन सभी का अंत घोषित करती है। वह इतिहास को अप्रामाणिक मानकर चलती है। उत्तर-आधुनिकता लेखक का अंत इस प्रकार घोषित करती है कि - "...लिखने के बाद हर 'पाठ' अपने रचनाकार से अलग हो जाता है। यहाँ तक की रचना अपने रचनाकार से नाता तोड़ लेती है - वह अपना स्वायत्त-स्वतंत्र जीवन जीती है और यह जीवन अर्थबहुलता-अर्थअनंतता में जीता बदलता रहता है। रचना का 'पाठ' अपने पाठक को कई तरह से जीता है और हर पाठक 'पाठ' को नया भाष्य देता है।"<sup>44</sup> जैसे ही रचना लेखक से अलग होकर पाठक तक पहुँचती है तुरंत लेखक का अंत हो जाता है, क्योंकि पाठक रचना को अपने अनुभव-जगत के आधार पर पढ़ता है, अर्थ ग्रहण करता है। लेखक की उसमें कहीं कोई भूमिका नहीं रह जाती। अतः लेखक का अंत माना जाता है।

### 7. परंपरा का अतिक्रमण :

परंपरा का अतिक्रमण अर्थात् परंपरा का उल्लंघन। उत्तर आधुनिकता परंपरा का उल्लंघन करती है। इस दृष्टि से उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का विस्तार है। उत्तर-आधुनिकता परंपरा का जो अतिक्रमण करती है उसके संदर्भ में पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' का मंतव्य है कि - "सांस्थानिकता में उत्तर-आधुनिकता समाज, विवाह, परिवार और शैक्षणिक संस्था - सबकी जड़बद्धता का अतिक्रमण करती है। परम्परा की जो मूल या मौलिक निधि है, इसे ही यह क्षत-विक्षत कर देती है।... यद्यपि परम्परा से अतिक्रमण साहित्य में पहले भी देखने को मिलते रहे, विभिन्नवादों ने पहले भी अपने-अपने ढंग से परम्परा को तोड़ने की चेष्टा की, पर जिस प्रकार समग्रता में मूलोच्छेद कर देने की नियत से उत्तर-आधुनिकता प्रहार-पर-प्रहार करती है, समग्रता में किया जाने वाला ऐसा प्रहार इससे पहले साहित्य में नहीं देखा गया।"<sup>45</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता

परंपरा को समूल नष्ट करने का प्रयास करती है । इससे पहले किए गए प्रयास इतने कमजोर थे कि परंपराएँ एक या दूसरे स्वरूप में बनी रही । उत्तर-आधुनिकता की यह विशेषता है कि वह अपने इस पहलू को पूरा महत्त्व देकर संपूर्णता के साथ परंपराओं को दूर करने का प्रयास करती है । उत्तर-आधुनिकता के प्रसिद्ध प्रवक्ता देरीदा भी मानते हैं कि - “परंपराएँ भ्रम मात्र है और इनके खिलाफ गुरिल्ला युद्ध लड़कर ही जीवन अथवा रचना का सही अर्थ ढूँढा जा सकता है ।”<sup>46</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता परंपराओं पर अपना सीधा आक्रमण करती है । परंपराओं के विरोध के कारण सामाजिक-साहित्यिक संरचनाओं में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन आता है । इससे मनुष्य व्यर्थ की विडंबनाओं से मुक्त होता है । मनुष्य कई प्रकार के बंधनों से मुक्त होता है । फलतः स्वतंत्र एवं स्वस्थ जीवन जी पाता है । सामाजिक बंधन शिथिल होने पर मानव-मानव के बीच की दूरी कम हो जाती है ।

### III. उत्तर-आधुनिकता का उद्भव :

उत्तर-आधुनिकता का उद्भव निश्चित तौर पर किस वर्ष में हुआ यह कहना थोड़ा मुश्किल है । सभी विद्वानों के मत में थोड़ा-बहुत फर्क रहा है ।

इन्द्रनाथ चौधरी के अनुसार - “पाश्चात्य साहित्य में आधुनिकता साठ के दशक में समाप्त होने लगी जब वियतनाम, वुडस्टोक, शांति मार्च, जातिगत दंगे, प्रदर्शन एवं हिंसा का समय था । सन् 1968 तक न्यूनतमवाद, जो आधुनिकता की परंपरा में अंतिम शैली थी, पूरी तरह समाप्त हो गई । सन् 1969 में आंद्रे ब्रेतों के तीसरे मृत्यु-दिवस पर अनुयायियों के एक दल ने घोषणा की कि अतियथार्थवाद का ऐतिहासिक युग समाप्त हो चुका है हालांकि इसमें कुछ शाश्वत मूल्य थे । सन् 1970 में उत्तर-आधुनिकता एक नया नारा बनकर सामने आयी ।”<sup>47</sup>

सुधीश पचौरी ने स्पष्ट करने का प्रयास किया कि - “यों उत्तर-आधुनिकता का इतिहास कुछ पुराना ही है । पहले-पहले जॉन बार्थ ने 1967 में कला के संदर्भ में इस पद का इस्तेमाल किया । लेकिन 1974 में पीटर बर्जर के ‘थियरी डर अवांगार्द’, 1979 में प्रकाशित ल्योतार की ‘द पोस्ट-मॉडर्न कंडीशन : ए रिपोर्ट ऑन नॉलेज’ तथा 1984 में प्रकाशित फ्रेडरिक जेमेसन की ‘पोस्ट मॉडर्निज्म’ और ‘द कल्चरल लॉजिक ऑफ लेट कैपीटलिज्म’ ने उस बुनियाद को रख दिया जिसे इन दिनों ‘उत्तर-आधुनिक शैतानी’ कहते हैं और जिसने कलाओं और समाजशास्त्रों में उपद्रव खड़ा किया हुआ है ।”<sup>48</sup>

डॉ. विनयकुमार पाठक लिखते हैं - “लियोतार उत्तर-आधुनिकता के अग्रणी प्रवर्तकों में अत्यंत उल्लेखनीय हैं। इन्होंने ‘दि पोस्ट मॉडर्न कंडीशन : ए रिपोर्ट ऑन नॉलिज’ (1984) लिखकर कोयबक सरकार को एक अकादमिक पुस्तिका भेंट की। इसके पूर्व इहब हसन ने सन् 1976 में उत्तर-आधुनिकता पर महत्त्वपूर्ण कृति ‘दि डिसमेंबरमेंट ऑफ आरफियस’ का प्रणयन करके साहित्य के प्रांगण में उत्तर-आधुनिकता को बहस के लिए छोड़ दिया।”<sup>49</sup>

देवेन्द्र चौबे का मानना है कि - “उत्तर आधुनिकता 1960 के दशक में अस्तित्ववाद के बाद फ्रांस का सर्वाधिक प्रभावित करनेवाला साहित्यिक चिंतन है।”<sup>50</sup>

उपर्युक्त संदर्भों से स्पष्ट होता है कि उत्तर-आधुनिकता का उद्भव सन् 1960 में यूरोप में हुआ है। उसका पहला प्रभाव समाज पर लक्षित होने लगा था। सन् 1970 तक आते-आते वह अपने स्पष्ट रूप में सामने आने लगी। कोई भी परिवर्तन जब अपने सारे लक्षणों के साथ सामने आता है तभी ही उसका नामाभिधान होता है। सन् 1970 में जो परिवर्तन सामने आया, उस परिवर्तन को नाम दिया गया - ‘उत्तर-आधुनिकता’। इस परिवर्तन का बुद्धिजीवियों, विचारकों, चिंतकों ने अध्ययन किया और उस पर अपने विचार, मत प्रकट किए। सन् 1984 में ल्योतार ने उत्तर-आधुनिकता की संपूर्ण अवधारणा स्पष्ट की। ल्योतार ने विज्ञान, दर्शन एवं समाज में आये परिवर्तनों का विश्लेषण करके उत्तर-आधुनिकता की स्थापना की है। ल्योतार की स्थापना के बाद देरीदा, फूको, जेमेसन, रोला बार्थ जैसे विद्वानों ने इसे और अधिक विकसित किया। अंततः उत्तर-आधुनिकता ने अन्य सभी प्रणालियों, विचारधाराओं, स्थापनाओं को विस्थापित करके अपना स्थान कायम किया।

यहाँ पर उत्तर-आधुनिकता का उद्भव किन कारणों से हुआ है यह देखना भी जरूरी बन जाता है।

उत्तर-आधुनिकता के उद्भव के पीछे दो कारण जिम्मेदार हैं - एक, स्वयं आधुनिकता और दो, प्रौद्योगिकी तथा संचार एवं सूचना की सतत विकसित होती हुई तकनीकें।

आधुनिकता के चरम विकास ने एक साथ दो भिन्न पहलुओं को जन्म दिया - एक, मानव-जीवन को विनाश की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया और दो, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकियों के विकास ने कम्प्यूटर युग को जन्म दिया। परिणाम-स्वरूप संचार एवं सूचना के बहाव ने संपूर्ण मानव-जीवन को अपनी गिरफ्त में ले लिया। कृष्णदत्त

पालीवाल ने साफ कहा कि - “दूसरे विश्व युद्ध के बाद ध्वस्त होता हुआ मानव-बिंब, उत्तर-आधुनिकतावाद में अपनी पूरी विकृतियों के साथ उभरता है। जिन देशों की भूमि पर युद्ध लड़े गए वहाँ एक ऐसा बौद्धिक सोच उभरा जो पुराने से बिदकता था। इसी सोच के भीतर से नीत्शे, सार्त्र ल्योतार, जान लकाँ जोनाथन कुलर, आलथूसे, टेरी ईगलटन, रोला बार्थ, देरीदा, ग्वात्री, पाल डी मान जैसे चिंतकों को उभार मिला। इन चिंतकों ने परंपरागत चिंतन की सभी प्रविधियों-मूल्यों के प्रति विद्रोह किया और कम्प्यूटर ऐज या डिजिटल ऐज में मानव प्रवेश कर गया।”<sup>51</sup> अर्थात् अति-आधुनिकता के प्रभावस्वरूप उत्पन्न नई परिस्थितियों ने विद्वानों-चिंतकों का ध्यान अपनी ओर खींचा और इन विद्वानों-चिंतकों ने नई उभरी हुई स्थितियों को ‘उत्तर-आधुनिकता’ नाम दिया। उत्तर-आधुनिकता के प्रमुख प्रवक्ता ल्योतार ने कहा कि - “नई प्रौद्योगिकी लगातार विकसित हो रही है, इसलिए हमें इस प्रौद्योगिकी के अनुरूप नया ज्ञान विकसित करने की आवश्यकता है। नई तकनीकें हमारे ज्ञान को प्रभावित करती हैं, इसलिए नई तकनीकों द्वारा दी गई चुनौती का सामना करने के लिए हमें प्रासंगिक व वास्तविक ज्ञान की आंतरिक विशेषताओं के प्रति सजग होना होगा।”<sup>52</sup> तात्पर्य यह कि उत्तर-आधुनिकता के उद्भव के मूल में प्रौद्योगिकी एवं विकसित तकनीकें रही हैं। उत्तर-आधुनिकता प्रौद्योगिकी एवं तकनीक के प्रभाव-स्वरूप विकसित की गई ज्ञान की एक नवीनधारा है। मूलतः इसका उद्देश्य यह रहा कि मनुष्य को प्रासंगिक एवं वास्तविक ज्ञान देकर उत्पन्न चुनौती के प्रति सजग किया जाए।

अभिजित पाठक ने कहा कि - “पश्चिमी विश्व में स्वयं ही बहुत बड़ा परिवर्तन आया है। इस परिवर्तन का कारण संचार एवं सूचना की सतत विकसित होती हुई तकनीकें हैं। वस्तुतः यह सूचना एवं संकेतों का युग है। इस नए युग ने आधुनिकता की मूल धारणा, जो कि उच्च संस्कृति और निम्न संस्कृति में अंतर करने की प्रक्रिया है, को एक चुनौती दी है।”<sup>53</sup> मतलब है कि मानव-जीवन में संचार एवं सूचना की तकनीकों के प्रभाव-स्वरूप परिवर्तन आया और यही परिवर्तन उत्तर आधुनिकता है। ज्ञान की इस नई धारा को विकसित करने में संचार एवं सूचना की प्रौद्योगिकी का महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है। यही कारण है कि उत्तर-आधुनिकता को मास मीडिया की देन कहा जाता है।

आधुनिकता ने मानव-संहार में जो भूमिका निभाई तथा उपनिवेशवाद, पूँजीवाद एवं केन्द्रवाद को जो मजबूत किया उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप भी उत्तर आधुनिकता का जन्म हुआ है। इस संदर्भ में अभिजित पाठक ने ही अपनी राय देते हुए कहा कि - “कोई भी

सचेत पर्यवेक्षक यह देख सकता है कि उत्तर-आधुनिकता, आधुनिकता एवं इसकी उपनिवेशवादी महत्त्वकाक्षाओं द्वारा विश्व को पहुँचाए गए नुकसार के कारण विश्व में व्याप्त अपराधबोध को प्रदर्शित करती है।<sup>54</sup> आधुनिकता की अंधी दौड़ में मनुष्य ने अपने-आप ही अपने लिए समस्याएँ निर्मित की। सुख-सुविधा के साधन निर्मित करने के लिए प्रकृति का अधिक मात्रा में दोहन किया और स्व-रक्षा हेतु ऐसे उपकरण बनाए जिसके उपयोग से मानव-जीवन का एक हिस्सा नष्ट हो जाए। प्रकृति के अधिक दोहन के कारण मानव-जीवन पर प्राकृतिक आपदाओं के संकट मँडराने लगे। स्व-रक्षा के साधन हरैक के पास होने के कारण एक-दूसरे पर इसका उपयोग होने लगा। फलतः दो विश्व-युद्धों में हिंसा का महातांडव देखने को मिला। आधुनिकता की उपलब्धियाँ मानव-जीवन को सुविधा-संपन्न बनाती हैं और उससे उत्पन्न समस्याएँ दुष्परिणाम की ओर ले जाती हैं। प्रकृति को फिर से बनाया नहीं जा सकता और न ही पदार्थों एवं वस्तुओं को पूर्वगत स्थिति में स्थापित किया जा सकता है। अतः उत्तर आधुनिकता का उद्भव मानव-कल्याण के लिए मध्यम मार्ग के रूप में हुआ है। सुधीश पचौरी ने इसी बात को व्यंजित करते हुए कहा कि - “ज्ञान के क्षेत्र में, दर्शन के क्षेत्र में आधुनिकता की अपनी ‘समस्या’ शुरु से रही है, जो एक हद तक विकास के एक चरण बाद (दो युद्ध करने के बाद) प्रकट हुई है। उत्तर आधुनिकता यहीं से शुरु होती है। आधुनिकता के समस्या-बिन्दु उत्तर-आधुनिकता के उत्स-बिंदु हैं।”<sup>55</sup> संक्षेप में उत्तर-आधुनिकता को उद्भवित करने का श्रेय आधुनिकता एवं संचार एवं सूचना की प्रौद्योगिकी को जाता है।

अतः स्पष्ट है कि सन् 1960 के बाद उत्तर-आधुनिकता का उद्भव यूरोप में हुआ और अपने व्याप के कारण समग्र विश्व में छा गई। नई उत्पन्न परिस्थितियों के कारण इस चिंतनप्रणाली, ज्ञानधारा का जन्म हुआ है।

#### IV. उत्तर-आधुनिकता का व्याप :

उत्तर आधुनिकता का व्याप इतना है कि उसने मानव-जीवन से जुड़े हुए पहलू पर अपना प्रभाव छोड़ा है। उसके प्रवक्ता एवं व्यापकता को ध्यान में रखते हुए देवेन्द्र चौबे ने कहा कि - “वास्तव में उत्तर - आधुनिकता के प्रवक्ताओं की पृष्ठभूमि अलग-अलग है। इनमें मिशेल फूको जहाँ दर्शन के व्याख्याकार हैं, वहाँ जाँक देरीदा इतिहास के, जाँक लाका जहाँ मनोविज्ञान से जुड़े हैं, वहाँ लेवी स्त्रोत और रोला बार्थ क्रमशः आदिम समाज, उसकी संस्कृति और मिथकों के निर्माण की प्रक्रिया के बहाने जीवन, साहित्य, समाज



आदि पर बात करने की कोशिश करते हैं। इसलिए कई बार उत्तर-आधुनिकता को समग्र विचार और चिंतन का विज्ञान अर्थात् ज्ञान का विज्ञान भी कहा जाता है, क्योंकि इसके सिद्धांतकार सिर्फ साहित्य पर ही बात नहीं करते हैं बल्कि उसे एक राजनीतिक विमर्श मानकर जीवन का नया अर्थ खोजने की भी माँग करते हैं।<sup>56</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता कोई एक विद्वान के द्वारा प्रवाहित होने वाली धारा नहीं है, बल्कि फूको, देरीदा, जाँक लाका, लेवी, रोला बार्थ, ल्योतार, जेमेसन जैसे अलग-अलग विद्वानों के चिंतन से अस्तित्व में आनेवाली विचारधारा रही है। उसके सभी व्याख्याता अलग-अलग विषय क्षेत्रों के ज्ञाता रहे हैं। इसलिए उसका व्याप समग्र विषय क्षेत्रों में रहा है।

सुधीश पचौरी के अनुसार - “उत्तर-आधुनिकता ने दैनिक जीवन के क्षेत्रों में जन्म लिया है। इसलिए यह कलात्मक, सामाजिक, आर्थिक तमाम क्षेत्रों में मौजूद स्थिति है। यह हर क्षेत्र की नई सूची और नई संहिता बनाती है।<sup>57</sup> आम जीवन के हर पहलुओं में मौजूद होने के कारण उत्तर-आधुनिकता हर जगह पर नई स्थितियाँ उत्पन्न करती है। अर्थात् वह जीवन को पुनर्व्याख्यायित करती है।

डॉ. विनयकुमार पाठक उत्तर-आधुनिकता की संस्कृति पर प्रभावकता को केन्द्र में रखकर कहते हैं कि - “उत्तर आधुनिकतावाद वर्तमान मानवीय स्थिति की विचारधारा और व्यवस्था पर आधारित चिंतन व दर्शन पर महत्त्वपूर्ण टिप्पणी है जिससे न केवल कला व साहित्य वरन् सर्वांग संस्कृति भी प्रभावित है।<sup>58</sup>”

उत्तर-आधुनिकता की व्यापकता ने संपूर्ण विश्व के साहित्य के स्वरूप एवं समीक्षा-प्रणाली को परिवर्तित कर दिया है। कृष्णदत्त पालीवाल ने साहित्य पर उत्तर-आधुनिकता की प्रभावशीलता को शब्दबद्ध करते हुए लिखा है - “उत्तर आधुनिकतावाद ने साहित्यिक-चिंतन की कई नई वैचारिक पद्धतियाँ-प्रविधियाँ-शैलियाँ विकसित की हैं। इन वैचारिक पद्धतियों में संस्कृतिक-अध्ययन क्षेत्र, नव-इतिहासवाद, नवमिथकवाद, अधीनस्थों का अध्ययन, नारीवाद, अश्वेत पीड़ा का अध्ययन, दलित-दमित साहित्य का अध्ययन आदि को जगह मिलती है।<sup>59</sup>”

संक्षेप में उत्तर-आधुनिकता का व्याप सर्वत्र फैला हुआ है। समग्र विश्व के कला, साहित्य, दर्शन, इतिहास, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, संस्कृति, विज्ञान आदि सभी विषय-क्षेत्रों पर उत्तर-आधुनिकता अपनी जड़े जमा चुकी है।

## V. उत्तर-आधुनिकता का प्रभाव :

मानव-जीवन पर उत्तर-आधुनिकता को प्रभाव सूक्ष्म एवं गहरा रहा है । सूचना प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी इस प्रभाव के माध्यम रहे हैं । यह प्रभाव वैश्विक एवं क्षेत्रीय दोनों स्तरों पर रहा है । क्षेत्र-विशेष की संस्कृतियाँ उत्तर-आधुनिकता के प्रभाव में आकर अपना अस्तित्व खो रही है और एक विश्व-संस्कृति का निर्माण हो रहा है । मनुष्य के संबंध बदल रहे हैं, भाषा बदल रही है और रहने के ढंग बदल रहे हैं । ये परिवर्तन अत्यंत तीव्र गति से हो रहे हैं । कृष्णदत्त पालीवाल के अनुसार, “नई-नई बौद्धिक तकनीकों से पूरे समाज को नियंत्रित कर लिया है । तकनीक ने सब कुछ बदल दिया । पुराना ज्ञान-विज्ञान, अर्थ-तंत्र आदि । कहना न होगा कि तकनीकी क्रांति के बल पर ही समृद्ध देशों ने नव-साम्राज्यवाद की नवीन अवधारणाओं को जन्म दिया । प्रत्यक्ष तौर पर मानव ने देखा कि सूचना, क्रांति और इलेक्ट्रॉनिक क्रांति ने ‘मॉडर्न सोसायटी’ की सोच को बदल डाला । इतना ही नहीं कम्प्यूटर-सिद्धांत, राजनीति और अर्थतंत्र की दिशा तय करने लगे। कम्प्यूटर-सिद्धांत ने ‘अनंतता’ को ‘विश्वास’ में बदल दिया और बाजार को ‘प्रबंधन-योग्य’ बनाने में भारी मदद की । व्यापार के सिद्धांत, शक्ति के सिद्धांत, अर्थशास्त्र-समाजशास्त्र के सिद्धांत कहना चाहिए, उन्नीसवीं शताब्दी के सिद्धांतों का पूरा इतिहास और गणित बदल डाला । तकनीक कम्प्यूटर, सेटलाइट, क्वैंटम आदि ने एक नए ‘ज्ञान-विश्व’ में मानव को खड़ा कर दिया ।”<sup>60</sup> अर्थात् तकनीकी क्रांति ने मानव समुदाय को प्रत्येक कोणों से बदल दिया । उत्तर आधुनिकता ने आधुनिकता के सारे सिद्धांतों को नया मोड़ दिया । आधुनिकता की सारी सीमाएँ टूट गयी । कम्प्यूटर ने न केवल मानव-समुदाय को आश्चर्यचकित किया किंतु उस पर पूरी तरह से अपनी सत्ता भी स्थापित की । उत्तर आधुनिक तकनीक ने साहित्य, संस्कृति, कला आदि के स्वरूप को बदल दिया है ।

उत्तर-आधुनिकता का सर्वाधिक सशक्त प्रभाव यह रहा कि उसने समाज के केन्द्रवाद पर सीधा प्रहार किया और केन्द्रीय सत्ता को तहस-नहस कर दिया । डॉ. मीना खरात इस संदर्भ में कहती हैं कि - “आधुनिकता में एक उच्च तथा सुसंस्कृत वर्ग राजनीतिक जीवन पद्धति और कला-संस्कृति का नियामक था । उत्तर-आधुनिकता ने उस वर्चस्व को समाप्त कर दिया है । अर्थात् केन्द्र के लोगों को परीधि में और परिधि के लोगों को केन्द्र में लाने का काम उत्तर-आधुनिकता ने किया है ।”<sup>61</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता ने परंपरा से चले आ रहे वर्चस्ववाद को चुनौती दी और केन्द्र की सत्ता को विघटित किया । इस प्रक्रिया में उत्तर-आधुनिकता ने हाशिए के लोगों को महत्त्व दिया

है और उन्हें केन्द्र में लाने का पूरा प्रयास किया है । परिणाम-स्वरूप अनंतकाल से हाशिए पर रहने वाले वर्ग केन्द्र में आने में सफल हुआ है । यही कारण है कि आज दलित, नारी तथा अल्पसंख्यकों की आवाज जोरों से सुनाई देती है ।

सुधीश पचौरी ने उत्तर-आधुनिकता के प्रभाव को अधिक सूक्ष्मता से व्यक्त करते हुए कहा कि - “नई स्थितियों में संस्थानों का आकर्षण खत्म होने लगा है । यही ‘महावृत्तांत’ का विखंडन है । केंद्रण का खात्मा है । संस्थान नहीं बचे हैं । व्यक्ति बचे हैं। भाषा के खेल की तरह । हर शब्द अपना अर्थ रखता हुआ और सबसे मिलकर कोई बड़ा अर्थ न बनाता हुआ । वे सामाजिक बंधन टूट गए हैं जो आधुनिकता ने बनाए थे ।”<sup>62</sup> अर्थात् उत्तर आधुनिकता ने समाज की हर पुरानी स्थितियों को बदलकर नई स्थितियों का निर्माण किया है ।

संक्षेप में उत्तर-आधुनिकता ने सारी जीवन-शैलियों को बदल दिया है । मानव-जीवन से जुड़े हर क्षेत्र नए ढाँचे में अपना आकार ग्रहण कर रहे हैं । दुनिया एक ‘विश्व-ग्राम’ बनने की ओर अग्रसर हो रही है ।

#### **VI भारत में उत्तर-आधुनिकता :**

उत्तर-आधुनिकता ने समग्र-विश्व पर अपना प्रभाव छोड़ा है । भारत भी उसके प्रभाव से अछूता नहीं रहा है । जैसे आधुनिकता भारत में आई वैसे ही उत्तर आधुनिकता भारत में आयी । भारत में आधुनिकता को लाने का श्रेय अंग्रेजों को जाता है । अंग्रेजों के शासनकाल के दौरान भारतीय समाज-व्यवस्था में जो बदलाव आया वह आधुनिकता का परिणाम है । अंग्रेजों ने अपनी सुशासन व्यवस्था हेतु भारत में नाना प्रकार के उद्योगों की स्थापना की । सुख-सुविधा के वैज्ञानिक उपकरणों का व्याप तत्कालीन समय में हो गया था । अंग्रेजों के समय में ही गाँवों के टूटने की तथा नगरों के विकसित होने की प्रक्रिया तीव्र हो गई थी । जब आधुनिक आविष्कारों का उपयोग होने लगता है तब उसके साथ-साथ चलने वाली विचारधारा भी अपने आप स्थापित हो जाती है । अतः सन् 1850 के बाद आधुनिकता भारत में आयी । किन्तु आधुनिकता का फायदा केवल वर्चस्ववादियों को ही हुआ । परंपरागत वर्ण-व्यवस्था एवं समाज-व्यवस्था में खास बदलाव नहीं आया । भारत में केन्द्रवाद अधिक मजबूत हुआ । भारत में आधुनिकता ने जातिवाद, प्रांतिवाद, कोमवाद आदि को अधिक प्रगाढ़ किया । आधुनिकता के कारण जो बदलाव पश्चिमी देशों में आया वह भारत में नहीं आ सका । परंपरागत मान्यताओं,

कूप्रथाओं, कूरुडियों तथा आपसी भेद-भाव ने नया रूप ग्रहण किया और अपनी जड़े जमा रखी ।

जैसे ही उत्तर-आधुनिकता भारत में आयी तो उसने भारतीय समाज व्यवस्था की जड़ें हिला दी । इन्द्रनाथ चौधरी भारत में उत्तर आधुनिकता की शुरुआत को लेकर कहते हैं कि - “भारतीय परिप्रेक्ष्य में उत्तर-आधुनिकता मीडिया-संचालित एवं बाजार-निर्देशित तथ्यों की प्रतिक्रिया के रूप में सामने आयी है ।”<sup>63</sup> अर्थात् मीडिया एवं बाजारवाद का जो प्रभाव भारतीय समाज पर पड़ा इसी प्रभाव में उत्तर-आधुनिकता प्रतिबिंबित होती है । भारतीय समाज में उत्तर-आधुनिकता की उपस्थिति की ओर संकेत करते हुए सुधीश पचौरी लिखते हैं - “अपने समाज में मौजूद उपद्रव बहुत कुछ आधुनिक और उत्तर-आधुनिक की टकराहटों का नतीजा हैं । अपने यहाँ बहुत कुछ पूर्व-आधुनिक स्थितियाँ भी मौजूद हैं । इसलिए यह तिहरी गाँठ है जो खुल रही है ।”<sup>64</sup> अर्थात् भारत में तीन प्रकार की स्थितियाँ मौजूद हैं - एक, पूर्व-आधुनिक, दो, आधुनिक और तीन, उत्तर-आधुनिक । आधुनिकता आने पर वर्चस्ववादियों ने आधुनिकता का फायदा भी उठाया और अपने वर्चस्व को कायम रखने वाली परंपराओं, कूप्रथाओं, कू-मान्यताओं एवं कू-रूडियों को भी न छोड़ा । अर्थात् भारत में आधुनिकता वर्चस्ववादियों के हाथ का खिलौना बनकर रह गयी । उत्तर-आधुनिकता आने पर उसने सीधा वर्चस्ववाद पर ही प्रहार किया । परिणाम-स्वरूप आधुनिकता एवं उत्तर-आधुनिकता के बीच टकराहटें उत्पन्न हो रही हैं । वर्चस्ववादियों ने ही पूर्व-आधुनिक स्थितियों को अब तक जीवित रखा है, किन्तु उत्तर-आधुनिकता आधुनिक एवं पूर्व-आधुनिक दोनों की स्थितियों को नष्ट करती जा रही है । अतः ‘यह तीहरी गाँठ’ अब खुल रही है ।

वैश्विक धरातल पर बने रहने के लिए एवं वैश्विक स्तर पर समायोजन स्थापित करने के लिए न चाहते हुए भी वैश्विक स्थितियों का स्वीकार करना अनिवार्य बन जाता है । सूचना एवं प्रौद्योगिकी भी एक अनिवार्य आवश्यकता बन गई है । अतः इन नवीन आविष्कारों का स्वीकार करना भी जरूरी बन जाता है । यही कारण है कि न चाहते हुए भी संपूर्ण भारतीय समाज को उत्तर-आधुनिकता का स्वीकार करना ही पड़ा । अनचाहे भी आज उत्तर-आधुनिकता पूरे भारत में अपने चरम उत्कर्ष पर है । कृष्ण दत्त पालीवाल के अनुसार - “भारत के मॉडर्न-बौद्धिकों ने उत्तरआधुनिकता की विभेदीय, विकेंद्रित, विखंडनवादी विचारधारा को स्वीकार कर लिया है । विखंडनवादी विचारधारा से ही हम पूर्व और पश्चिम के समाज-साहित्य-व्यापार को समझ रहे हैं । यही दृष्टि विभिन्न

भारतीय जातियों-संस्कृतियों के बीच सक्रिय है।<sup>65</sup> भारत के हर क्षेत्र में उत्तर-आधुनिकता का व्यापक प्रभाव आज दिखाई पड़ता है। साहित्य, कला, संस्कृति, राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र सभी विषय क्षेत्रों में आज उत्तर-आधुनिकता केन्द्रीय मुद्दा बनी हुई है। खासकर उत्तर-आधुनिकता की विखंडनवादी प्रवृत्ति ने संपूर्ण भारतीय समाज में उथल-पूथल मचा दी है। केन्द्रीय सत्ता अब विस्थापित हो रही है तथा हाशिए के लोग केन्द्र में आ रहे हैं। भारत में उत्तर-आधुनिकता के प्रभाव को व्याख्यायित करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल ने स्वीकार किया है कि - “भारत की सांस्कृतिक-राजनीतिक स्थिति में ऐसी परिस्थिति पैदा हुई है कि उच्च जातियों का वर्चस्ववाद कमजोर पड़ा है और राजनीति शक्ति सत्ता के क्षेत्र में पिछड़ी दमित दलित जातियाँ उभरकर सामने आई हैं। उत्तर-आधुनिकतावाद का पूरा सोच ‘सबाल्टर्न’ पिछड़े दमित वर्ग के साथ है।”<sup>66</sup>

संक्षेप में उत्तर-आधुनिकता के परिणाम-स्वरूप भारत में आज वर्चस्ववाद टूटता जा रहा है, केन्द्रीय सत्ता शिथिल हो रही है, हाशिए के लोगों की आवाज ऊँची उठी हुई है, सूचना एवं प्रौद्योगिकी अपना चरम प्रभाव दिखा रही है, परंपरागत, मान्यताएँ प्रथाएँ अपनी जड़ों से नष्ट हो रही हैं।

#### VII उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व :

प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विकास तथा आधुनिकता की प्रतिक्रिया स्वरूप उद्भवित होनेवाली उत्तर-आधुनिकता का समसामयिक परिस्थितियों में विशेष महत्त्व रहा है। आधुनिकता से उत्पन्न समस्याओं से निपटने में उत्तरआधुनिकता सहायक सिद्ध होती है। आधुनिकता की खंडनात्मक प्रवृत्तियों की प्रतिक्रिया के रूप में ही इसका जन्म हुआ है। वह मनुष्य को भावि जीवन के लिए सज्ज एवं सजग करती है। उचित न्याय-प्रणाली एवं औचित्य भरी दृष्टि उसकी प्रमुख विशेषता रही है। उत्तर-आधुनिकता के महत्त्व को स्थापित करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल नये समाज-तंत्र के संदर्भ में कहते हैं - “यह वह नया समाज-तंत्र है जो पुरानी राजनीति, संस्कृति, परंपरा, सभी को पछाड़कर अपना प्रभुत्व कायम करता है। नए प्रबंधन के नाम पर ‘उपेक्षित जनों’ को नई राजनीतिक चेतना देता है और वे अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं। इसमें समाज वस्तु उत्पादक अर्थव्यवस्था (या उत्पादक व्यवस्था) में बदल जाता है। इसमें तकनीक-दक्ष जन उभरते और यही लोग समाज की गति को तय करते हैं।”<sup>67</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता असमानता को दूर करती है और बौद्धिकता तथा योग्यता को महत्त्व देती है

। इससे ढकोसले जैसी परंपराओं का अंत होता है । वह आनेवाली समस्याओं के प्रति सजग करती है तथा जीवन के महत्त्वपूर्ण सवालों के प्रति हमारा ध्यान आकर्षित करती है । इस दृष्टि से उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है कि वह असमानता को दूर करके मानवीयता को स्थापित करने का प्रयास करती है । वह एकाधिकार एवं केन्द्रवाद को खारिज करती है इसमें ही उसका महत्त्व है । इस संदर्भ में डॉ. मीना खेरात का कहना है - “पश्चिम के एकाधिकार को भी चुनौती मिल रही है । साथ ही वर्गवादी और सामन्तशाही व्यवस्था को भी खारिज कर दिया गया है । जिससे हर वर्ग का व्यक्ति वैश्विक मानव के रूप में अपनी स्वतंत्र अस्मिता को स्थापित करने का प्रयास कर रहा है। यही उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व है । जो उसे नवीन अर्थवत्ता देता है ।... जहाँ कष्ट है वहीं कुछ प्रयास भी हो रहे हैं जो श्रेयस्कर हैं । दलित, पिछड़े, उपेक्षित, समलैंगिक, स्त्रियाँ और उपेक्षित लोगों को केन्द्र में लाने का उत्तर आधुनिक प्रयास निःसंदेह प्रशंसनीय है ।”<sup>68</sup>

आधुनिकता ने पूँजीवाद को जन्म दिया और पूरी तरह से विकसित किया । समग्र दुनिया पर पूँजीपतियों का साम्राज्य स्थापित हुआ, जिसमें सामान्य मनुष्य पीसा जा रहा था । उत्तर-आधुनिकता पूँजीवाद का विरोध करती है और पूँजीवाद को सर्वभक्षी मानकर उसे खारिज करने का प्रयास करती है । अतः इस दृष्टि से भी उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व कम नहीं है । जॉन मैकगोवान ने लिखा है कि - “उत्तर-आधुनिकता का लक्ष्य इसी पूँजीवादी समग्रता को विखंडित करता है ।”<sup>69</sup>

संक्षेप में वर्तमान की समस्याओं को उजागर करने वाली, समाज के नव-निर्माण के लिए प्रयास करनेवाली तथा मानवीय पहलुओं को साथ लेकर चलनेवाली उत्तर-आधुनिकता का महत्त्व कम नहीं है । वह वर्तमान की माँग एवं आवश्यकता रही है ।

### 3. आधुनिकता और उत्तर-आधुनिकता :

उत्तर-आधुनिकता को संपूर्ण रूप में समझने के लिए आधुनिकता के साथ उसके संबंध को देख लेना जरूरी बन जाता है । उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता से कैसे और क्यों अलग है, यह समझने से उत्तर-आधुनिकता का एक निश्चित रूप सामने आता है ।

कुछैक विद्वानों ने उत्तर-आधुनिकता को आधुनिकता का विस्तार माना है । उनका मानना है कि उत्तर-आधुनिकता का जन्म आधुनिकता की अगली कड़ी के रूप में हुआ है। उत्तर-आधुनिकता के प्रमुख प्रवक्ता ल्योतार का कहना है कि - “उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का आखिरी बिंदु नहीं है, बल्कि उसमें मौजूद एक नया बिंदु है

और यह दशा लगातार है।”<sup>70</sup> अर्थात् उत्तर-आधुनिकता, आधुनिकता का ही विस्तार है । इस अर्थ में उत्तर-आधुनिकता को अति-आधुनिकता भी कहा जा सकता है ।

अधिकांशतः विद्वानों ने यह स्वीकृत किया है कि उत्तर-आधुनिकता का उद्भव आधुनिकता की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ है । इसलिए वह आधुनिकता का विस्तार नहीं है । दो विश्वयुद्धों की विभीषिका को मानव-समुदाय ने अनुभूत किया । परिणाम-स्वरूप आधुनिक समाज के ढाँचे में परिवर्तन आया । इस सामाजिक परिवर्तन ने उत्तर-आधुनिकता को जन्म दिया । प्रतिक्रिया के इस भाव ने उत्तर-आधुनिकता को आधुनिकता के विरोध में खड़ा कर दिया है । कृष्णदत्त पालीवाल ने ‘उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का विस्तार है’ इस मत को खारिज करते हुए कहा कि - “उत्तर-आधुनिकता में आधुनिकतावाद के पूरे चिंतन को चुनौती दी जा रही है । इसलिए यह कहना कि आधुनिकतावाद का ही विस्तार उत्तर-आधुनिकतावाद है - भ्रम को ही पालना है ।”<sup>71</sup> कृष्णदत्त पालीवाल का यहा तर्क भी उचित ही है क्योंकि उत्तर-आधुनिकता ने आधुनिकता के सारे सिद्धांतों को गलत घोषित करके खारिज कर दिया । आधुनिकता के द्वारा विकसित होनेवाला ‘केन्द्रवाद’ भी उत्तर-आधुनिकता के आक्रमण के सामने नष्ट हो गया । जब उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता के विरोध में खड़ी दिखाई पड़ती है तो उसे आधुनिकता का विस्तार कहना अनुचित भी होगा । आधुनिकता इतिहास को प्रामाणिक मानकर प्रश्रय देती है तो उत्तर-आधुनिकता उसे खास वर्ग का ढकोसला मानकर खारिज करती है । अंततः डॉ. मीना खेरात के अनुसार यह भी सही है कि - “उत्तर-आधुनिकता को चूँकि आधुनिकता का उत्कर्ष या अवसान माना जाता है, किन्तु आधुनिकता के बिना हम उसकी कल्पना नहीं कर सकते ।”<sup>72</sup>

उत्तर-आधुनिकता और आधुनिकता के बीच जो अंतर है, वह हम इन पहलुओं पर देख सकते हैं -

1. उत्तर-आधुनिकता इतिहास को भ्रम का पुलिंदा मानकर अस्वीकार करती है, आधुनिकता इतिहास का समर्थन करती है ।
2. उत्तर-आधुनिकता अन्तरराष्ट्रीयता को महत्त्व देती है, आधुनिकता राष्ट्रीयता को प्रबल करती है ।
3. उत्तर-आधुनिकता केन्द्र का विस्थापन करती है, आधुनिकता केन्द्र को मजबूत करती है ।

4. उत्तर-आधुनिकता व्यक्तिगत भूमिका को महत्त्व देती है, आधुनिकता संस्थागत भूमिका को महत्त्व देती है ।
5. उत्तर-आधुनिकता तार्किकता का विरोध करती है, आधुनिकता तार्किकता को महत्त्व देती है ।

संक्षेप में उत्तर-आधुनिकता और आधुनिकता के बीच अविच्छिन्न संबंध रहा है । भले ही उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता की विरोधिनी रही हो, किन्तु उसके उद्भव के मूल में आधुनिकता ही रही है ।

### निष्कर्ष :

आधुनिकता एवं उत्तर-आधुनिकता दोनों ने मानव-जीवन को संपूर्ण रूप से प्रभावित किया है । बौद्धिक-क्रांति ने आधुनिकता को जन्म दिया । नई सोच ने पुरानी सोच को प्रभावित किया । आधुनिक उपकरणों ने जीवन-प्रणाली को बदल दिया । आधुनिकता की विकृतियों ने मानव-समाज पर भौतिक तथा अभौतिक संकट उत्पन्न किए । पूँजीवाद, वर्चस्ववाद, केन्द्रवाद मजबूत हुए । सामान्य मनुष्य की आवाज एवं अस्मिता दब गई । आधुनिकता की इन परिस्थितियों के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप उत्तर-आधुनिकता का उद्भव हुआ । सूचना एवं प्रौद्योगिकी को साथ लेकर चलने वाली उत्तर-आधुनिकता ने मानवतावादी बिन्दुओं पर अपना प्रभाव छोड़ा । इसके कारण केन्द्रवाद, पूँजीवाद, वर्चस्ववाद अपनी जगह से विस्थापित हो रहे हैं । उत्तर-आधुनिकता मानव-मानव के बीच की दूरी खत्म करके एक विश्व-संस्कृति का निर्माण कर रही है । और अपने अर्थ-संदर्भों में कालमूलक तथा चिंतनात्मक-समीक्षात्मक विचारधारा के रूप में प्रयुक्त हो रही है ।

### संदर्भ सूची

1. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-53
2. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनय कुमार पाठक, पृष्ठ-32
3. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-29
4. वही, पृष्ठ-39-40
5. वही, पृष्ठ-56
6. वही, पृष्ठ-56
7. वही, पृष्ठ-57
8. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनयकुमार पाठक, पृष्ठ-32-33



9. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-13-14
10. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-41
11. वही, पृष्ठ-45
12. वही, पृष्ठ-133
13. वही, पृष्ठ-54
14. वही, पृष्ठ-133
15. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-19
16. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-54-55
17. वही, पृष्ठ-30
18. वही, पृष्ठ-40
19. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-84
20. वही, पृष्ठ-74
21. उत्तर-आधुनिक साहित्यिक विमर्श, सुधीश चौधरी, पृष्ठ-20
22. हिन्दी-साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनय कुमार पाठक, पृष्ठ-87
23. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-83
24. वही, पृष्ठ-55-56
25. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-8-9
26. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्तकुमार मिश्र, पृष्ठ-48
27. वही, पृष्ठ-17
28. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-36
29. उत्तर-आधुनिकता और मनोहर श्याम जोशी, डॉ. मीना खरात, पृष्ठ-76
30. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-69-70
31. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-22
32. उत्तर-आधुनिकता : बहुआयामी संदर्भ, पाण्डेय शशिभूषण 'शीताशुं', पृष्ठ-52
33. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-104
34. वही, पृष्ठ-125-126
35. वही, पृष्ठ-42
36. आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, देवेन्द्र चौबे, पृष्ठ-70
37. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनयकुमार पाठक, पृष्ठ-89
38. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-29
39. वही, पृष्ठ-33
40. उत्तर आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-47
41. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-45
42. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनयकुमार पाठक, पृष्ठ-89-90

43. उत्तर-आधुनिकता : बहुआयामी संदर्भ, पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', पृष्ठ-23
44. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-79
45. उत्तर-आधुनिकता : बहुआयामी संदर्भ, पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', पृष्ठ-27
46. आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, देवेन्द्र चौबे, पृष्ठ-69
47. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्तकुमार मिश्र, पृष्ठ-34
48. उत्तर-आधुनिक साहित्यिक विमर्श, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-24-25
49. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनयकुमार पाठक, पृष्ठ-87
50. आधुनिक साहित्य में दलित-विमर्श, देवेन्द्र चौबे, पृष्ठ-68
51. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-36
52. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्त कुमार मिश्र, पृष्ठ-66
53. वही, पृष्ठ-44
54. वही, पृष्ठ-51
55. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-16
56. आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, देवेन्द्र चौबे, पृष्ठ-69
57. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-84
58. हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, डॉ. विनयकुमार पाठक, पृष्ठ-89
59. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-24
60. वही, पृष्ठ-87
61. उत्तर-आधुनिकता और मनोहर श्याम जोशी, डॉ. मीना खरात, पृष्ठ-78
62. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-76
63. उत्तर-आधुनिकता : कुछ विचार, सं.देवशंकर नवीन, सुशान्तकुमार मिश्र, पृष्ठ-34
64. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-7
65. उत्तर-आधुनिकतावाद और और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-26
66. वही, पृष्ठ-56
67. वही, पृष्ठ-87
68. उत्तर-आधुनिकता और मनोहर श्याम जोशी, डॉ. मीना खरात, पृष्ठ-77
69. उत्तर-आधुनिक साहित्यिक विमर्श, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-15
70. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, पृष्ठ-123
71. उत्तर-आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-36
72. उत्तर-आधुनिकता और मनोहर श्याम जोशी, डॉ. मीना खरात, पृष्ठ-75